चन्दामामा
फरवरी १९६४

फरवरी १९६४

विषय - सूची

★

एक प्रति ६० नये पैसे   वार्षिक चन्दा रु. ७–२०

हमदर्द
दिल्ली • कानपुर • पटना
नौनिहाल
बच्चों को प्रसन्न रखता है।
बच्चों के दांत निकलते समय होनेवाली तकलीफों में और उनके स्वास्थ्य के विकास के लिए नौनिहाल ग्राइप सिरप और नौनिहाल बेबी टानिक फायदेमंद होता है।

एक दुर्घटना का सदुपयोग
अरे यार, उदास क्यों हो ?
आज मेरा बटुआ खो गया। उसमें २० रुपये थे। मैं एक बल्ला खरीदनेके लिए पैसे जमा कर रहा था।
तुम अपने पैसे बैंक में क्यों नहीं जमा करते ?
कौनसा बैंक मेरा खाता खोलेगा ?
देना बैंक। उनकी "अल्पवयस्क बचत योजना" में तुम खाता खोल सकते हो।
पिताजी, क्या आप देना बैंक में खाता खोलने के लिए मुझे ५ रुपये देंगे ?
जरूर ... और देखो, अपना बचाया सब पैसा अपने खाते में जमा करते रहना।
देना बैंक
अल्पवयस्क बचत योजना
• १० वर्ष और अधिक उम्र के बालक खाते खोल सकते हैं
• ५ रुपये से खाते खोल सकते हैं
• ब्याज ३%
• आकर्षक सेविंग्ज बॉक्स मुफ्त दिया जाता है
अधिक जानकारी अपने निकटतम देना बैंक ऑफिस से प्राप्त कीजिए
१२५ से अधिक ऑफिस और ४० सेफ डिपॉजिट वॉल्ट
प्रवीणचंद्र ब. गांधी मैनेजिंग डाइरेक्टर
देवकरण नानजी बैंकिंग कं. लिमिटेड
रजिस्टर्ड ऑफिस :- देवकरण नानजी बिल्डिंग, १०, एल्फिन्स्टन सर्कल, फोर्ट, बम्बई १

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

★

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नये पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

★

व्यवस्थापक
चन्दामामा प्रकाशन
वडपळणी :: मद्रास-२६

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

हर मास हमारे पास पाठकों के पत्र भारी संख्या में आते हैं। एक शिकायत कई पत्रों में होती है, वह यह कि 'चन्दामामा' में चुटकले और कविताओं की कमी है।

हम इस विषय में यही कहना चाहेंगे कि 'चन्दामामा' प्रधानतः कहानियों की पत्रिका है, ऐसी कहानियों की, जो विशेषतः माँ बच्चों के लिए अधिक उपयोगी और मनोरंजक हैं।

वर्षः १५ फरवरी १९६५ अंकः ६

भारत का इतिहास

फिरोज़ शा के मरने के बाद, उसका पोता तुगलक शा घियासुद्दीन तुगलक द्वितीय के नाम से सुल्तान बना। परन्तु कुछ कर्मचारी और बुजुर्गों ने मिलकर साजिश की, उनको १९ फरवरी १३८९ को मरवा दिया। उसके बाद उसके सम्बन्धी, अबू बकर को, दिल्ली के प्रमुखों ने सुल्तान बनाया। इस बीच, फिरोज़ के लड़के, नासिरुद्दीन मोहम्मद को उसके अनुयायियों ने सायान के पास सुल्तान बनाया। अबू बकर विरोधियों का मुकाबला न कर सका, उसने १३९० में राज्य भार छोड़ दिया। नासिरुद्दीन की तन्दुरुस्ती भी बिगड़ी और वह भी १३९४ में मर गया। उसके बाद उसका लड़का, हुमायूँ गद्दी पर आया। उसने कुछ दिन राज्य किया, फिर वह भी ८ मार्च को मर गया। उसके बाद उसका सबसे छोटा लड़का, नासिरुद्दीन मोहम्मद गद्दी पर आया। यह ही तुगलक वंश का अन्तिम सुल्तान था। इसका एक विरोधी था, जिसका नाम था, नुसृत शा। यह फिरोज़ के बड़े लड़के का लड़का था। कुछ बड़े बुजुर्गों की सहायता से गद्दी लेनी चाही, पर वह अपने प्रयत्न में असफल रहा और विद्रोहियों द्वारा मार दिया गया।

फिरोज़ के बाद जो आये, वे सब कमजोर थे। इससे पहिले साम्राज्य का जो विघटन प्रारम्भ हो गया था, उसे कोई भी न रोक सका। वे दिल्ली के बुजुर्गों के हाथ में कठपुतली से थे। वे गद्दी पाने के लिए आपस में लड़ने झगड़ने लगे। इसलिए दिल्ली की सरकार की धाक बिल्कुल कम हो गई। देश में जहाँ जहाँ सुल्तान के प्रतिनिधि थे, मुसल्मान और हिन्दू

दोनों अपने को स्वतन्त्र घोषित करने लगे। जोनपुर, गुजरात, मालवा, खानदेश, ग्वालियर, मेवात आदि स्वतन्त्र हो गये।

जब दिल्ली के साम्राज्य में यों अराजकता फैली हुई थी, अमीर तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया। तैमूर इतिहास में प्रसिद्ध है। यह ट्रान्स एसियाना के केश नामक जगह पर १३३६ में पैदा हुआ। यह एक तुर्क जाति का था। वह १३६९ में, समरकन्द की गद्दी पर आया और उसने अपने साम्राज्य को बढ़ाने के लिए फारस, अफगानिस्तान, पेसोपोकेदिया आदि पर आक्रमण किया। भारत की श्री सम्पदा ने भी उसको आकर्षित किया। दिल्ली की अराजकता ने उसको आक्रमण करने का अच्छा मौका दिया।

तैमूर के पोते मोहम्मद ने १३९८ में, मुल्तान पर हमला किया, और उसको छः महीने बाद वश में कर लिया। १३९८ के एप्रिल में तैमूर बड़ी सेना के साथ समरकन्द से निकला। सिन्ध, झेलम, रावी, नदी पार करके, उसी साल ओक्टोबर १२ को मुल्तान से ७० मील दूर तलम्ब स्थान पर आया। उसने तलम्ब को

लूटा। वहाँ के कुछ लोगों को मरवा दिया। कुछ को कैद कर लिया। रास्ते में वह अनेक नगरों को लूटता, लोगों को मारता, दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में दिल्ली के पास पहुँचा। उसने करीब-करीब लाख आदमियों को, जो कैदी बना लिए गये थे, मरवा दिया। मुल्तान मोहम्मद मुल्ला इकबाल ने दिसम्बर १७ को १० हज़ार घुड़सवारों, चालीस हज़ार पदातियों को लेकर, १२० हाथियों के साथ, तैमूर का मुकाबला किया, परन्तु वे हार गये और भाग गये।

अगले दिन, तैमूर ने दिल्ली में प्रवेश किया। कई रोज तक दिल्ली को लूटा गया, वहाँ के नागरिक भयंकर तुर्कों के हाथ मारे गये। कई कैदी बना लिए गये। दिल्ली की कला की चीजें, समरकन्द पहुँचाई गई और वहाँ तैमूर की योजना के अनुसार, जामा मस्जिद बनाई गई।

तैमूर ने भारत में न रह जाना चाहता था। दिल्ली में १५ रोज रहकर, वापिस जाते जाते फिरोजाबाद (१३९९ जनवरी) मेरठ (जनवरी ९) हरिद्वार के पास, दो हिन्दु सेनाओं को कान्गाडा (जनवरी १६) को हराकर, जम्मू को लूटकर, असंख्य लोगों की हत्या करवाई। वह मुल्तान, लाहौर, दीमालपुर आदि पर शासन करने के लिए खिज्रखान सैय्यद को नियुक्त करके, सिन्धु नदी के पार चला गया। जितनी हानि इस देश को उसने पहुँचायी, किसी और आक्रान्ता ने नहीं पहुँचायी थी।

तैमूर के बाद, दिल्ली में अकाल आया। जो लोग बाकी रह गये थे, वे भी मर गये। कहते हैं कि दो महीने तक दिल्ली पर पक्षी भी न मँडराये। दिल्ली की सल्तनत पहिले ही कमजोर थी, तैमूर के हमले ने उसे और भी नेस्तनाबूद कर दिया। १३९९ में, नुसुत शा ने सुल्तान बनना चाहा, परन्तु मुल्ला इकबाल ने उसको भगा दिया। १४०१ में मुल्ला दिल्ली आया। उसने मोहम्मद शा को भी बुलवाया, १४०५ नवम्बर १२ को मुल्ला इकबाल खिज्रखान से लड़ते मारा गया। मोहम्मद फिर से सुल्तान बना। २० वर्ष तक नाम मात्र के लिए वह सुल्तान रहा। १४१३ में वह मर गया और उसके साथ तुगलक वंश का भी अन्त हो गया।

महाभारत

फिर व्यास ने मृतकों को चले जाने के लिए कहा। मृतक जिन-जिन वाहनों पर आये थे, रथ पर आये थे, उन पर सवार होकर, फिर गंगा जल में चले गये और वहाँ से यथाशीघ्र अपने अपने लोक चले गये।

व्यास ने स्त्रियों की ओर मुड़कर कहा—"जो आप में से अपने पतियों के साथ जाना चाहें, वे इस गंगा में उतरें।"

धृतराष्ट्र की बहुयें अपने ससुर की अनुमति लेकर, गंगा में उतरीं। उन्होंने अपने भौतिक शरीर गंगा में छोड़ दिये और वे अपने दिव्य शरीरों के साथ, अपने पतियों से मिल गयीं। वे उनको अपने विमानों में चढ़ाकर अपने लोक गये।

फिर धृतराष्ट्र और लोगों के साथ, अपने आश्रम चला आया। व्यास ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर को यह कहने के लिए कहा कि वह वापिस जाकर राज्य करे।

धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा—"बेटा, अब तुम सब वापिस चले जाओ। तुम्हारे होते हमारी तपस्या नहीं चल सकती। मैं उसी तरह सुखी रहूँगा, जिस तरह हस्तिनापुर में था।

युधिष्ठिर धृतराष्ट्र को छोड़कर, विशेषत: कुन्ती को छोड़कर जाने में बड़ा हिचका। पर जब कुन्ती ने स्वयं कहा, तो वह न न कर सका। अन्त:पुर की स्त्रियों को और नौकर-चाकरों को लेकर, हस्तिनापुर वापिस चला गया।

अन्तिम पृष्ठ

धृतराष्ट्र के तीन वर्ष के बनवास के बाद, एक दिन नारद महामुनि युधिष्ठिर को देखने आये। युधिष्ठिर ने उनका आतिथ्य करके कुशल प्रश्न पूछे।

"तुम्हें देखे बहुत दिन हो गये हैं। तपोवन से तीर्थों को देखता, तुम्हारे पास आया हूँ।" नारद ने कहा

"गंगातीर के लोगों ने मुझे बताया है कि धृतराष्ट्र बड़ी कठिन तपस्या कर रहे हैं। क्या आपने उनको देखा? क्या वे ठीक हैं? गान्धारी और कुन्ती और संजय का क्या हालचाल है? अगर मालूम हो, तो बताइये।" युधिष्ठिर ने कहा।

"युधिष्ठिर जो कुछ हुआ है, सुनाता हूँ। स्थित धी होकर सुनो। तुम्हारे आने के बाद, धृतराष्ट्र, कुन्ती, गान्धारी और संजय के साथ, गंगा के मुख की ओर निकले। उनके पास के हवन करानेवाले ब्राह्मण भी हवनकुण्ड लेकर, उनके साथ गये। वहाँ तुम्हारे ताया ने छः मास तक मौन रखा, वायु भक्षण किया। तीव्र तपस्या करके वहाँ के मुनियों को चकित कर दिया। उनके शरीर में सिवाय हड्डियों के कुछ न रहा। गान्धारी ने फलाहार किया, कुन्ती ने मास-भर उपवास किया। संजय छटे प्रहर का खाना खाता। फिर धृतराष्ट्र स्वयं जंगल में घूमने-फिरने लगे। गान्धारी और कुन्ती उनके साथ गईं। संजय उनको पकड़कर चलाया करता। कुन्ती गान्धारी को चलाया करती। एक दिन गंगा में स्नान करके, जब वे आश्रम वापिस आ रहे थे, तो एक तूफ़ान आया और जंगल में आग लग गई। धृतराष्ट्र तो पहिले ही बिना खान-पान के दुबले थे, वह उस स्थिति में चल न पाया। गान्धारी और

कुन्ती भी कमज़ोर थी। थक गई थी। जब आग आ रही थी, तो धृतराष्ट्र ने संजय से आग से बचकर निकल जाने के लिए कहा। संजय को धृतराष्ट्र, कुन्ती, गान्धारी को आगे बचकर, स्वयं भाग जाना बिल्कुल पसन्द न था। न वह यह ही सोच सका कि उनको आग से कैसे बचाया जाय। तब धृतराष्ट्र ने कहा कि उस जैसे तपस्वी जल, अग्नि में से किसी एक में प्राण छोड़ सकते हैं, यह कहकर संजय को जाने के लिए कहा। धृतराष्ट्र, कुन्ती और गान्धारी पूर्व की ओर बैठ गये। संजय ने उनकी प्रदक्षिणा की और चला गया। वह गंगा तटवालों को सब बताकर कहीं चला गया। इस तरह धृतराष्ट्र, गान्धारी और कुन्ती आग में जल गये। उनको जले हुए शरीरों को भी मैंने देखा है।" नारद ने कहा।

पाण्डवों को यह दुखद समाचार सुनकर बड़ा दुख हुआ। अन्तःपुर रोने धोने से गूँज उठा। हस्तिनापुर और सारे देश दुखी हो गया।

युधिष्ठिर अपने दुख को रोकते हुए कहा—"इतनी कठिन तपस्या करके, हम सब के यहाँ होने पर भी हमारी तायें को इन परिस्थितियों में मरना पड़ा। बच्चों के जाने के बाद गान्धारी के मौत से भी उतना दुखी नहीं हुआ। हम ऐश्वर्य में हैं, कुन्ती को सुखी होना था, वह भी यों मर गई। छी छी, यह राज्य क्यों! यह पराक्रम क्यों! हमें कभी मर जाना चाहिए था और हम अब भी जिन्दे हैं। काल को कौन जाने! नहीं, तो पाण्डवों की माँ का जंगल की आग में जलकर मर जाना भी क्या बात है! अग्नि देवता की

अर्जुन ने जो मदद की थी, वह सब बेकार गयी। अग्नि भी देखो, कितनी कृतघ्न है कि उसने यह काम किया!"

नारद ने एक और बात बताई। उसने युधिष्ठिर से कहा—"धृतराष्ट्र को मामूली आग ने नहीं जलाया था। वायु भक्षक होकर तपस्या की, यज्ञ करके धृतराष्ट्र ने अग्नि छोड़ दी। हवन करनेवाले ब्राह्मणों ने हवनकुण्ड निर्जन वन में छोड़ दिया। उस अग्नि से जंगल में छोड़ देने से जल्दी ही दावाग्नि सुलग पड़ी। यह बात मुझे मुनियों ने बताई। इसलिए धृतराष्ट्र अपनी अग्नि में ही जलकर मर गया और वह यों उत्तम लोकों का अधिकारी बना। अब तुम और तुम्हारे भाई उनके लिए शीघ्र ही तर्पण करो।"

फिर युधिष्ठिर एक कपड़ा पहिनकर, भाइयों और नागरिकों के साथ गंगा नदी के तट पर गया। उसने वहाँ धृतराष्ट्र गान्धारी और कुन्ती का शास्त्रोक्त विधि से अन्तिम संस्कार किया। वे शोक में नगर से ही बाहर ही रहे। जहाँ धृतराष्ट्र आदि मर गये थे, वहाँ लोगों को भेजा, जो कुछ वहाँ करना था, उसने करवाया। उसने बारह दिन शोक किया। फिर श्राद्ध किया। धृतराष्ट्र के नाम पर सोना, चान्दी, गौवें, पलंग आदि दान में दिये। इसी तरह गान्धारी और कुन्ती के नाम पर भी दान करवाये। उस समय जिसने जो कुछ माँगा, उसने वह पाया। वाहन, पलंग, भोजन, सोना, वस्तु, दास और दासियों को दान दिया।

फिर युधिष्ठिर ने हस्तिनापुर में प्रवेश किया, जिनको गंगा मुख के पास गया था, उन्होंने आकर बताया कि जो कुछ वहाँ किया जाना चाहिए था, वह कर दिया गया था। युधिष्ठिर से सब कर्मकाण्ड करवाकर, नारद चले गये।

[३१]

[जंगली आदमियों की सहायता से केशव और उसके साथी कैद से छुड़ा दिये गये। फिर उन्होंने पंखवाले मनुष्यों के झोंपड़ों को आग लगायी। तब जो हो हल्ला मचा, उसमें से निकल भागे। परन्तु उनको शत्रुओं ने मगरोंवाली झील के पास रोका। बीदाली और श्वानकर्णी केशव को पुकारने लगे। बाद में]

केशव और उसके साथियों को बचाने के लिए जो दो जंगली नवयुवक आये थे वे अपने सरदारों का चिल्लाना सुन बड़े आश्वस्त हुए। एक दो मिनिट वे पंखवाले मनुष्यों से मैदान लेते रहे, तो बाद में उनके लोग उनकी मदद के लिए आ जायेंगे, यह वे जानते थे। केशव और जयमल्ल भी जान गये कि क्या हो रहा था। वे भी जंगली गोमान्ग को उकसाने लगे और पंखवाले मनुष्यों को मगरोंवाली झील में धकेलने लगे।

इतने में गोमान्ग ने नीचे पड़े भाले को उठाया और उससे पंखवाले मनुष्यों को भोंकने लगा। "केशव, अब हमें कोई खतरा नहीं है। अब हथियार मिल गया है, तुम भी इन दुष्टों से

कुश्ती करना छोड़कर, हथियार लेकर लड़ो।"

गोमान्ध से मार खाकर पंखवाले मनुष्य चीखते-चिल्लाते, मगरोंवाली झील में गिरने लगे। यह देख बाकी लोग सिर पर पैर रखकर भागने लगे। "सरदार, खतरा। गुहावासी सैकड़ों, हज़ारों की संख्या में हम पर हमला करने आ रहे हैं।" वे चिल्लाये।

यह सुनते ही पंखवाले मनुष्य, जो जहाँ था, वहाँ से जंगल की ओर भागा। गरुड़ के मुँहवाले सरदार ने भी सोचा कि अपने आदमियों को उकसाकर, जंगलियों से युद्ध करना ठीक न था। परन्तु यदि एक बार पीठ दिखाई गई, तो बाद में, ये लोग हमें कुछ समझेंगे ही नहीं—उसने सोचा। पर अब क्या किया जाय?

गरुड़ के मुँहवाले की दुविधा जानकर, ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक ने मन्त्रदण्ड उठाकर कहा—"जय कालभैरव, गरुड़ महाराज! यह हमारे लिए कष्ट काल है। यह स्थिति अच्छी नहीं मालूम होती। कालभैरव नाराज़ हो गये हैं। अब हम कुछ भी नहीं कर सकते। इन गुहावासियों और जयमल्ल आदि के हम पर हमला करने से पहिले ही चलो हम जंगल में भाग जायें। जल्दी करो।"

"मान्त्रिक, यही मैं सोच रहा हूँ। हम गरुड़ जातिवालों को रात में बिल्कुल कुछ नहीं दिखाई देता। सूर्योदय होने दीजिये। फिर अपना प्रताप दिखायेंगे।" कहता कहता वह जल्दी जल्दी चला।

इतने में जित और शक्तिवर्मा वहाँ भागे भागे आये। उनकी हाथ की तलवारें आधी टूटी हुई थीं। उनके शरीर खून से लथपथ थे।

जित और शक्तिवर्मा को देखते ही ब्रह्मदण्डी के प्राणों में प्राण आये। उसने उनके पास आकर कहा—"जित, शक्ति, अभी क्या तुम जीवित ही हो। मैं तो इस ख्याल में था कि उन दुष्टों ने तुम्हारी हत्या कर दी है।"

"वे........और........हमारी हत्या।" जितवर्मा ने ज़ोर से हँसते हुए कहा—"देखो, ये हमारी नंगी तलवारें और खून से लथपथ हमारे शरीर। कितने शत्रुओं को हमने मार गिराया है, हम ही नहीं जानते। तलवारों के टूट जाने के कारण हमें पीछे लौटना पड़ा।"

जितवर्मा की बात पर ज़ोर से हँसते हुए स्थूलकाय ने कहा—"तुम दोनों में यदि किसी एक ने भी कहा कि उसने शत्रु देखा है, तो मैं उसका विश्वास नहीं करूँगा। अभी तक किसी पेड़-पाड़ पर छुपे हुए होंगे।"

जित और शक्तिवर्मा स्थूलकाय पर अपनी टूटी हुई तलवारों से हमला करने ही वाले थे कि गरुड़ के मुँहवाले ने उनको रोकते हुए कहा—"छी, जानते हो। तुम्हारे कारण ही हमारे राज्य पर आपत्ति आयी है। तुम्हारे पहरे में से, ये दुष्ट कैसे भाग निकले! यह बात मुझे अभी मालूम होनी चाहिए। नहीं तो तुम्हें पक्षी माता पर बलि चढ़ा दूँगा।" उसने उन पर भाला उठाया।

इतने में गुहावासी उधर आते हुए मालूम हुए। ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक ने गरुड़ के मुँहवाले सरदार का हाथ पकड़कर कहा—"गरुड़ महाराज! आप ज़रा शान्त होइये। इन जंगलियों का गिरोह इसी तरफ़ आ रहा है। यदि हम यहाँ से पहिले भागे न, तो खतरा आ पड़ेगा...."

"दोनों ही नहीं, यह मांस का लोथड़ा स्थूलकाय भी हमारा अपमान कर रहा है। अब तो हमारी तलवारें खुण्डी हो गई हैं। अच्छी तलवारें मिलते ही पहिले इन सब का काम तमाम करेंगे।" शक्तिवर्मा ने कहा।

इतने में उनको "बीड़ाली की जय" का जयकार सुनाई पड़ने लगा, चमचमाते भाले भी उनकी ओर आने लगे। "कुछ और तेज़ी से भागो। लगता है, हमें शत्रुओं ने देख लिया है। जित और शक्ति, तुम अपनी बकवास बन्द करो—चुप।" ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक हरिण की तरह आगे कूदा।

ब्रह्मदण्डी अभी कह ही रहा था कि गरुड़ के मुँहवाला जंगल की ओर भागने लगा। स्थूलकाय, ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक, जितवर्मा और शक्तिवर्मा भी उसके पीछे भागे।

जितवर्मा ने शक्तिवर्मा से कहा—"देखा शक्ति, हमने शत्रुओं को मारने काटने में जो शूरता दिखाई, वह किसी काम की न रही। उस पंखवाले आदमी के साथ, यह ब्रह्मदण्डी भी हमारी शूरता पर सन्देह करता-सा मालूम होता है। अब तुम ही बताओ।"

केशव अपने साथी, बीड़ाली और श्वानकर्णी गिरोहों को साथ लेकर, जब गरुड़ के मुँहवाले सरदार के झोंपड़ी के पास गया, तो वहाँ कोई पंखवाला आदमी न दिखाई दिया। केशव और जयमल जान गये कि वे आपत्ति की आशंका करके, जंगलों में भाग गये होंगे। परन्तु अन्धेरे में उनका पीछा करना सम्भव न था। इसलिए केशव ने जंगली आदमियों को इक्के-दुक्के लेकर जंगल में जाने के लिए

कहा और पंखवाले आदमियों को मारने के लिए कहा। ऐसे एक युद्ध के हाथ ब्रह्मदण्डी और गरुड़ के मुँहवाला सरदार भी मारा जाता। परन्तु वे सौभाग्यवश भाग गये।

रात केशव और उसके साथियों ने गरुड़ के मुँहवाले सरदार के जलते झोंपड़े के पास ही काट दी। सूर्योदय हो गया। पंखवाले मनुष्य जिन पंखों का, पेड़ों पर से कूदने के लिए उपयोग करते थे, उनके ढेर के ढेर दिखाई दिये। उनको देखकर बीड़ाली, श्वानकर्णी जान गये कि उतने दिन, उन्होंने कैसे धोखा दिया था। वे पंख स्वाभाविक न थे।

"हम सोच रहे थे कि ये उनके सचमुच पंख थे। हम सोच रहे थे कि ये पक्षियों की तरह आकाश में उड़ सकते थे। सब धोखा है।" बिड़ाली ने कहा।

"उनका धोखा अब मालूम हो गया है। अब उनका भी जंगली जानवरों की तरह पीछा करेंगे। वे बड़े डरपोक भी हैं। उनमें कितना साहस है, यह तो हम पहिले ही जान गये हैं।" श्वानकर्णी ने कहा।

केशव और जयमल्ल, जंगलवासियों के सरदारों का हौसला देख बड़े सन्तुष्ट हुए। सूर्योदय के बाद बीड़ाली और श्वानकर्णी ने केशव और जयमल्ल और जंगली गोमान्ग के गौरवार्थ दावत दी। उस दावत में गाना बजाना भी हुआ। युवक गुहावासियों ने मल्ल युद्ध किये और कई तरह के व्यायाम प्रदर्शन किये।

दावत में जयमल्ल ने बीड़ाली और श्वानकर्णी को एक सलाह दी। चूँकि अब पंखवाले मनुष्यों का भय नहीं रह गया था इसलिए गुफायें छोड़कर, समतल प्रदेश में घर बनाने के लिए उनसे कहा।

इस सलाह को अस्वीकृत करते हुए, श्वानकर्णी ने कहा—"हम बाप-दादाओं के ज़माने से गुफाओं में रहते आये हैं। अब गुफायें छोड़कर, कैसे पेड़ों के नीचे रहें!" बीड़ाली ने भी यही कहा।

जयमल्ल ने हँसकर कहा—"एक काम करो। खैर, सब एक साथ गुफाओं में से न आओ, कम से कम आपके जवान लोग तो आयें। गुफाओं में रहने की अपेक्षा रोशनी और हवा में रहना, अधिक स्वास्थ्य प्रदायक है और जब यह कुछ लोग जान जायेंगे, तो और भी उनकी देखा देखी आ जायेंगे। कुछ भी हो—उन पंखवाले मनुष्यों को फिर से यहाँ झोंपड़े न बनाने दो। इस जगह पानी आदि की अच्छी सुविधा है। समृद्ध है, इसे न छोड़ना। हमारी बात मानो।"

"उन पंखवाले मनुष्यों के बारे में हमें कोई भय नहीं है। तुम्हारी सहायता के कारण मैं अपने मूल पुरुष की महिमावाली गदा पा सका। बीड़ाली और मुझ में अब शत्रुता नहीं है। हम मित्र हैं, हमारे

गुटों की जो तुमने मदद की है, हम उसे नहीं भूल सकते। तुम जो सहायता चाहो, वह माँगो। हम मुश्किल से मुश्किल काम कर सकते हैं।" श्वानकर्णी ने कहा।

श्वानकर्णी की बात पर बीड़ाली ने भी अपना सिर हिलाया।

जयमल्ल ने अपने साथियों को देखकर, बीड़ाली और श्वानकर्णी से कहा—"हम जानते हैं, जो कुछ हम सहायता माँगेंगे, वह तुम करोगे। हमें भयंकर घाटी में जाना है। तुम में अगर कोई ऐसा आदमी है, जो वहाँ जाकर आया हो, हमें बताओ।"

जयमल्ल के यह कहते ही बीड़ाली और श्वानकर्णी ने एक दूसरे को देखा। दोनों के मुँह पर आश्चर्य और भय थे।

श्वानकर्णी ने एक बार खंखार कर कहा—"हमारी पीढ़ी में कोई ऐसा नहीं है, जो वहाँ जाकर जीवित लौटा हो। पर हमने उसके बारे में सुना है। वह विन्ध्यारण्य के परे एक बड़ी घाटी है। वहाँ पहुँचना बड़ा कठिन है। पर तो भी, तुम वहाँ क्यों जाना चाहते हो?"
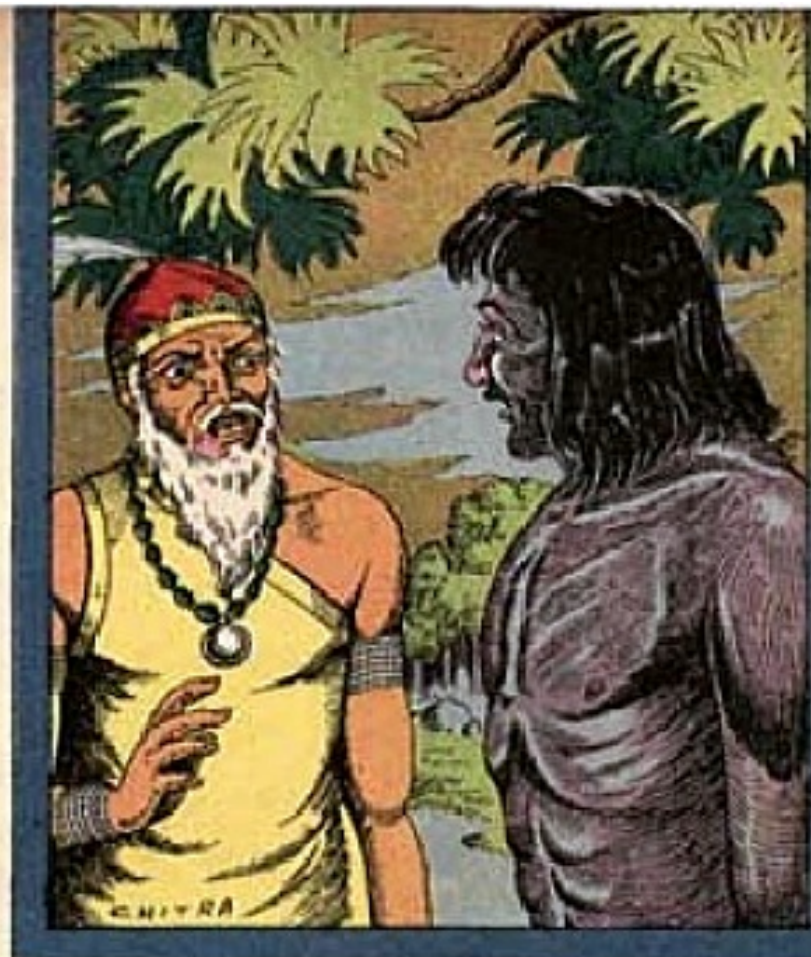
"बीड़ाली, तुम्हारी बातों से ऐसा लगता है, जैसे तुम वहाँ जाने का रास्ता जानते हो, वह रास्ता कहाँ है, इतना भर दिखा दो। उस घाटी में एक औषधी है, हमें वह चाहिए। ब्रह्मपुर के राजा को एक बीमारी है। उस औषधी से राजा की बीमारी ठीक हो सकती है। इसलिए राज-वैद्यों ने हमें भेजा है।" जयमल्ल ने कहा।

"बीड़ाली ने जैसा कहा है, उस घाटी में जाना असम्भव है, आना असम्भव है। सोच लो।" श्वानकर्णी ने कहा।

"क्यों श्वानकर्णी, तुम यह सोच रहे हो कि हम वह सब बिना जाने ही इतनी दूर आये हैं। हम हर तरह के खतरे का मुकाबला करने को तैयार हैं। हमें रास्ता दिखा दो। तुम हमारी एक और मदद भी कर सकते हो। इस गरुड़ के मुँहवाले के साथ ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक भी है। यदि वह तुम्हें मिले, तो जब तक हम वापिस न आ जायें, उसे या तो पकड़ लेना या उसे मार देना। हमें कोई एतराज नहीं है।" जयमल्ल ने कहा।

"हाँ, हम वह देख लेंगे। हम तुम्हें भयंकर घाटी का रास्ता ही न दिखायेंगे, बल्कि मैं और बीड़ाली तुम्हारे साथ आयेंगे भी। क्यों बीड़ाली!" श्वानकर्णी ने कहा।

बीड़ाली ने जोश दिखाते हुए कहा—"मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मैं अपने गुट के लिए एक नौजवान को सरदार चुनकर तुम्हारे साथ आ सकता हूँ।"

इस पर जयमल्ल और केशव ने आपत्ति की। फिर कुछ बातचीत हुई। सूर्यास्त के बाद, जयमल्ल और केशव और जंगली गोमान्ग को वहाँ के ऊँचे पर्वत की चोटी से, बड़ी-बड़ी जड़ों की सहायता से बीड़ाली और श्वानकर्णी के लोगों ने एक घाटी में उतारा। उन्होंने बताया कि उस घाटी के सुरंग में से वे चलते गये, तो वे एक भयंकर घाटी में पहुँचेंगे।

जड़ों की सहायता से उतरे हुए केशव उसके साथियों को दूरी पर ढोल धमाका सुनायी दिया। जब उन्होंने उस तरफ़ मुँह फेरा, तो कोई बाल फैलाकर, उनके सामने उछल कूद रहा था। उसके हाथ में एक भयंकर पक्षी था। [अभी है]

कौव्वे की सहायता

एक नौजवान था, जो पक्षियों को पकड़कर उन्हें बेचकर जीवन निर्वाह किया करता था। एक दिन वह जाल लेकर जंगल गया। एक पेड़ पर उसे बिछाकर यह देखता बैठा रहा कि कौन पक्षी उसमें फँसता है। इतने में एक कौव्वा आकर फँसा। वह पेड़ पर चढ़कर उसे पकड़ने वाला था कि कौव्वे ने मनुष्य की भाषा में कहा—"मुझे न पकड़ो। मुझे यदि तुमने छोड़ दिया, तुम्हें एक अद्‌भुत पक्षी मिलेगा। यदि तुमने उसे ले जाकर सुल्तान को दिया तो तुम्हें बहुत-सा ईनाम मिलेगा।" युवक ने कौव्वे की बात पर विश्वास किया। उसे जाल से छोड़ दिया। फिर एक बार और जाल लगाया। उसके पेड़ से उतरते ही कहीं से कोई सुन्दर पक्षी आया, टहनी पर बैठा और जाल में फँस गया। युवक ने पेड़ पर चढ़कर देखा, तो वह उसके रंग, अद्‌भुत सौन्दर्य देखकर दंग रह गया। वह किन्नर पक्षी था। उस जाति के पक्षी को उस देश में किसी ने न देखा था। वह उस पक्षी को एक बड़े पिंजड़े में रखकर सुल्तान को दिखाने गया।

सुल्तान भी उस पक्षी को देखकर बड़ा चकित हुआ। खुश भी। उसने उस युवक को बहुत-सा धन दिया। फिर उसने उसको एक सोने के पिंजड़े में रखा, और हमेशा उसी के पास ही रहा करता। सुल्तान के वज़ीर को यह सब पसन्द न था। उसे यह गँवारा न था कि कोई ऐरा गैरा एक पक्षी को पकड़कर लाकर, सुल्तान से इतना धन ले जाये। उसने सोचा कि

इस ईनाम की कीमत जैसे भी हो वसूली जानी चाहिए।

उसने सुल्तान के पास जाकर कहा—"हुज़ूर, इस पक्षी का सौन्दर्य तो इतना है कि यह सोने का पिंजड़ा इसके लिए काफ़ी नहीं है। यदि दान्त का छोटा-सा भवन तैयार किया गया तो अच्छा होगा।"

"इसमें तो कोई शक नहीं है, पर इतना दान्त हमको मिलेगा कहाँ से!" सुल्तान ने पूछा।

"जिसने पक्षी बेचा है, वह ही यह काम भी देखेगा।" वज़ीर ने कहा।

वज़ीर ने युवक को दरबार में बुलाया और उसे आज्ञा दी कि चालीस दिन में आवश्यक दान्त लाये।

"उतना दान्त मैं कहाँ से लाऊँगा!" युवक ने अचरज में कहा।

"यह सुल्तान की आज्ञा है। कैसे लाना है यह तुम ही सोचो, यदि तुमने चालीस दिन में यह काम न किया, तो तुम्हारा सिर काट दिया जायेगा।" दुष्ट वज़ीर ने कहा।

युवक दुःखी और चिन्तित हो, पैर घसीटता घसीटता राजमहल के अन्दर गया। वह अभी इसी दुविधा में था कि किधर जाये कि एक कौव्वा उसके कन्धे पर आकर मँडराया। उसने पूछा—"क्यों क्या बात है? क्यों यों दुःखी हो रहे हो?"

"मैं इसी खुशी में था कि उस पक्षी को बेचकर मैंने बहुत-सा धन कमा लिया है। मगर अब सुल्तान कह रहे हैं कि उसके लिए घर बनाना है, और उसके लिए ज़रूरी दान्त लाना है। यदि मैं इसे चालीस दिन में न लाया, तो मेरी जान ले ली जायेगी। अब क्या किया जाये?" युवक ने कहा।

कौव्वे की सहायता

एक नौजवान था, जो पक्षियों को पकड़कर उन्हें बेचकर जीवन निर्वाह किया करता था। एक दिन वह जाल लेकर जंगल गया। एक पेड़ पर उसे बिछाकर यह देखता बैठा रहा कि कौन पक्षी उसमें फँसता है। इतने में एक कौव्वा आकर फँसा। वह पेड़ पर चढ़कर उसे पकड़ने वाला था कि कौव्वे ने मनुष्य की भाषा में कहा—"मुझे न पकड़ो। मुझे यदि तुमने छोड़ दिया, तुम्हें एक अद्‌भुत पक्षी मिलेगा। यदि तुमने उसे ले जाकर सुल्तान को दिया तो तुम्हें बहुत-सा ईनाम मिलेगा।" युवक ने कौव्वे की बात पर विश्वास किया। उसे जाल से छोड़ दिया। फिर एक बार और जाल लगाया। उसके पेड़ से उतरते ही कहीं से कोई सुन्दर पक्षी आया, टहनी पर बैठा और जाल में फँस गया। युवक ने पेड़ पर चढ़कर देखा, तो वह उसके रंग, अद्‌भुत सौन्दर्य देखकर दंग रह गया। वह किन्नर पक्षी था। उस जाति के पक्षी को उस देश में किसी ने न देखा था। वह उस पक्षी को एक बड़े पिंजड़े में रखकर सुल्तान को दिखाने गया।

सुल्तान भी उस पक्षी को देखकर बड़ा चकित हुआ। खुश भी। उसने उस युवक को बहुत-सा धन दिया। फिर उसने उसको एक सोने के पिंजड़े में रखा, और हमेशा उसी के पास ही रहा करता। सुल्तान के वजीर को यह सब पसन्द न था। उसे यह गँवारा न था कि कोई ऐरा गैरा एक पक्षी को पकड़कर लाकर, सुल्तान से इतना धन ले जाये। उसने सोचा कि

इस ईनाम की कीमत जैसे भी हो वसूली जानी चाहिए।

उसने सुल्तान के पास आकर कहा—"हुज़ूर, इस पक्षी का सौन्दर्य तो इतना है कि यह सोने का पिंजड़ा इसके लिए काफ़ी नहीं है। यदि दान्त का छोटा-सा भवन तैयार किया गया तो अच्छा होगा।"

"इसमें तो कोई शक नहीं है, पर इतना दान्त हमको मिलेगा कहाँ से!" सुल्तान ने पूछा।

"जिसने पक्षी बेचा है, वह ही यह काम भी देखेगा।" वज़ीर ने कहा।

वज़ीर ने युवक को दरबार में बुलाया और उसे आज्ञा दी कि चालीस दिन में आवश्यक दान्त लाये।

"उतना दान्त मैं कहाँ से लाऊँगा!" युवक ने अचरज में कहा।

"यह सुल्तान की आज्ञा है। कैसे लाना है यह तुम ही सोचो, यदि तुमने चालीस दिन में यह काम न किया, तो तुम्हारा सिर काट दिया जायेगा।" दुष्ट वज़ीर ने कहा।

युवक दुःखी और चिन्तित हो, पैर घसीटता घसीटता राजमहल के अन्दर गया। वह अभी इसी दुविधा में था कि किधर जाये कि एक कौव्वा उसके कन्धे पर आकर मँडराया। उसने पूछा—"क्यों क्या बात है! क्यों यों दुःखी हो रहे हो!"

"मैं इसी खुशी में था कि उस पक्षी को बेचकर मैंने बहुत-सा धन कमा लिया है। मगर अब सुल्तान कह रहे हैं कि उसके लिए घर बनाना है, और उसके लिए ज़रूरी दान्त लाना है। यदि मैं इसे चालीस दिन में न लाया, तो मेरी जान ले ली जायेगी। अब क्या किया जाये!" युवक ने कहा।

"जैसा मैं कहूँ वैसा करो, दुःखी न हो। सुल्तान के पास जाकर कहो कि यदि चालीस पीपे शराब के दिये गये, तो दान्त ले आओगे। उस शराब को गाड़ियों में जंगल ले आओ! जंगल में एक तालाब है जहाँ हाथी पानी पीने आते हैं, उसमें यह शराब उड़ेल दो। हाथी आयेंगे और शराब पीकर बेहोश गिर जायेंगे। तब उनके दान्त काट लाना।" कौव्वे ने सलाह दी।

युवक ने कौव्वे को अपनी कृतज्ञता बताई। जैसा उसने कहा था वैसा करके उसने सुल्तान को दान्त लाकर दे दिया। यह देख सुल्तान और भी खुश हुआ। उसने उसे और भी ज्यादह ईनाम दिया। उसने कारीगरों को बुलाकर पक्षी के लिए सुन्दर घर बनवाया।

यह देख वज़ीर और भी जला। पक्षी पकड़नेवाले की हैसियत और भी बढ़ी। वज़ीर ने उसको तबाह करने के लिए एक और रास्ता सोचा। उसने सुल्तान के पास जाकर कहा—"हुज़ूर आपने अद्भुत पक्षी पाया है। उसके लिए आपने और भी अद्भुत घर बनवाया है। यह सब ठीक है। पर आपने यह भी सोचा कि पक्षी क्यों नहीं गाता है?"

"मुझे भी यही सन्देह हो रहा है।" सुल्तान ने कहा।

"यह जंगलों में रहनेवाला पक्षी नहीं है। किसी का पालतू पक्षी है, पक्षी को पकड़कर लानेवाले आदमी के पकड़ने से पहिले हो न हो, उसका कोई मालिक था। यदि उसके मालिक को लाया गया, तो मेरा विश्वास है कि यह पक्षी भी गाने लगेगा।"

"पर कैसे पता लगे कि इसका मालिक कहाँ है?"

"यह तो उस पक्षी पकड़नेवाले को ही मालूम होगा।" वज़ीर ने कहा।

"तो क्या उसके मालिक को बुला सकोगे!" सुल्तान ने पूछा।

"वह सब मुझ पर छोड़ दीजिये।" वज़ीर ने कहा।

"उसने युवक के पास फिर खबर भिजवायी। उसको बताया कि अगर चालीस दिन में सुल्तान को यह न बताया गया कि उसका पहिला मालिक कौन था, तो तुम्हारा सिर कटवा दिया जायेगा।"

"उसका मालिक कौन है यह भला मैं कैसे जानूँगा! जब उसे मैंने पकड़ा था, तब वह जंगल में आराम से फिर रहा था।" युवक ने कहा।

"तो मैं भी क्या कर सकता हूँ। यह सुल्तान की आज्ञा है और वह आज्ञा मैंने तुमको बता दी है। यदि तुमने इस आज्ञा का पालन न किया, तो तुम जानते ही हो क्या नतीजा होगा।" वज़ीर ने कहा।

युवक चिन्तित हो घर गया और पलंग पर औंधे मुँह गिरकर ज़ोर से रोया। खिड़की में से एक कौव्वा आया और उसने पूछा कि अब क्या आफत आ पड़ी थी। युवक ने उसे सब कुछ बता दिया।

"इसमें इतने चिन्तित होने की क्या बात है। दरबार में जाओ। सुल्तान की विहार नौका और चालीस दासियों को माँगो। उस नौका में छोटा-सा उद्यान और स्नानशाला है। उसे यदि समुद्र में चलाते रहे तो एक विचित्र द्वीप आयेगा, वह समुद्र से पहाड़ की तरह उठा हुआ होगा। उस द्वीप के पास नौका का लँगर डलवाओ। वहाँ एक तरह की अप्सरायें रहती हैं। उन अप्सराओं की रानी इस पक्षी की मालकिन है। इस नौका को देखते ही, वहाँ की स्त्रियाँ इसके अन्दर घुसकर, इसको देखना चाहेंगी। सिवाय रानी के किसी को अन्दर न आने दो। उसके लिए, मनोरंजन की व्यवस्था करो और जब वह उनमें मस्त हो, तो नौका का लँगर उठवा देना और नौका वापिस ले आना।" कौवे ने सलाह दी।

युवक ने इस सलाह के अनुसार ही किया। जैसे उसने बताया था, सब वैसा हो भी गया। अप्सराओं की रानी एक छोटी-सी नौका में, वह नौका देखने आयी। नौका की दासियों ने उसे मिठाइयाँ वगैरह देकर उसको स्नान करवाया। जब

यह सत्कार खतम हुआ, तो नौका तेज़ी से जा रही थी और द्वीप का कहीं पता भी न था। रानी को सन्देह हुआ कि उस पर कोई आपत्ति आनेवाली थी। परन्तु युवक ने उससे विनयपूर्वक कहा—"आप बेफिक्र रहिये, एक छोटा-सा काम है, इसके लिए आपको हम अपने सुल्तान के पास ले आ रहे हैं और कुछ नहीं है।"

नौका स्वदेश पहुँची। युवक रानी को साथ लेकर, सुल्तान के पास गया। यह जानते ही कि नौका पहुँच गई थी, सुल्तान दान्त के घर के पास ही अपना सिंहासन रखवाकर उस पर बैठा था। रानी और युवक के अन्दर पैर रखते ही किन्नर पक्षी खूब अच्छी तरह गाने लगा। सब उस गाने में तन्मय थे। सबसे अधिक तन्मय अप्सराओं की रानी थी। वह उस तन्मयता में अपने को भूल गई थी। सुल्तान के आनन्द की तो सीमा ही न थी। उसे ही नहीं मालूम था कि वह अप्सराओं की रानी के सौन्दर्य पर अधिक मुग्ध था या किन्नर के गायन पर, उसने उसको अपने पास बिठाया, उसने सोचा कि उसका जन्म सार्थक हो गया था।

उसके कहने पर रानी उससे विवाह करने के लिए मान गई। अगले दिन ही विवाह और दावत वगैरह हुए। ऐसा लगता था, जैसे देश की सभी चिन्तायें कहीं और स्थान न पाकर मन्त्री के मन में ही घर कर गई थीं। अब उसे न सूझ रहा था कि और क्या किया जाये।

कुछ समय बीत गया। सुल्ताना बीमार पड़ी। राजवैद्यों ने उसकी चिकित्सा करने का प्रयत्न किया। परन्तु बीमारी न गई।

सुल्तान से वैद्यों ने कहा—"यह साधारण मानव भी नहीं है। इसलिए

हमारी दवाइयाँ इन पर काम नहीं करेंगी। जब तक, जहाँ ये रहती थीं, वहाँ से औषधियाँ नहीं लायी गईं, तो यह बीमारी ठीक न होगी।"

तुरत वज़ीर ने कहा—"पक्षियों को पकड़नेवाला जो है, उसे आकर दवा लाने के लिए कहिए।"

युवक नौका में फिर एक बार अप्सराओं के द्वीप में गया। इस बार नौका देखने कोई भी नहीं आयी। युवक को स्वयं पहाड़ पर चढ़ना पड़ा। जब वह राजमहल के पास गया, तो उसके द्वार पर दो शेर बैठे थे। एक नये आदमी को देखकर, दान्त निकालकर वे जोर से गरजने लगे।

युवक, जहाँ खड़ा था वहीं भय में घबरा गया। आगे कदम रखता तो शेर उसे चीर फाड़ देते। यदि वापिस जाता तो सुल्ताना बीमारी से मरती और सुल्तान, सुल्ताना को मरा देख मरता और उसको फाँसी की सज़ा मिलती। वह इसी फ़िक्र में था कि कहीं से कोई कौव्वा आया, उसके कन्धे पर आकर मँडराया, "क्यों, क्या हो गया है! क्यों यों काँप रहे हो!" युवक ने अपनी समस्या उससे कही।

"मेरा एक पंख हाथ में लेकर उससे शेरों को सहलाओ। ये तुम्हारा कुछ न बिगाड़ेंगे।" कौव्वे ने कहा।

युवक कौव्वे का पंख लेकर उसके कहे अनुसार राजभवन में गया। अप्सरायें उसके चारों ओर आ बैठीं और जब उनको अपनी रानी के व्याधि के बारे में मालूम हुआ, तो उन्होंने उसको एक औषधी लाकर दी। उसे लेकर वह तुरत स्वदेश गया।

सुल्तान तो उसकी प्रतीक्षा कर ही रहा था; उसके आते ही वह उसको साथ

लेकर सुल्ताना के पास गया। वह मरणासन्न थी। उस समय कौव्वा खिड़की में से उसके ऊपर मँडराया।

औषधी की बूँद ज्योंही गले के नीचे उतरी तो उसने आँखें खोलीं। उसने युवक के कन्धे पर कौव्वे को देखकर पूछा—"अरे, तुम हो! आलसी कहीं की...." कौव्वे ने यों दिखाया, जैसे वह यह सुनकर डर गयी हो।

"मैं जानती हूँ, इस लड़के को मारने के लिए चालें चली गईं थीं, उन चालों को तुमने अपनी मदद देकर असफल कर दिया। अब तुमने मेरी भी मदद की है। मेरे प्राणों की रक्षा की है।" सुल्ताना ने कौव्वे से कहा।

उसे अब पहिले का स्वास्थ्य मिल गया था और वह उठकर बैठ गई।

"तुम्हारा और इस कौव्वे का क्या सम्बन्ध है?" सुल्तान ने अपनी पत्नी से पूछा।

"यह मेरी दासी है। जब इसने मेरी ठीक सेवा नहीं की, तो मैंने शाप देकर, इसको कौव्वा बना दिया। अब मैं उसे माफ़ कर देती हूँ।" सुल्ताना ने कहा।

वह यह कह रही थी कि कौव्वा अदृश्य हो गया और उसकी जगह एक कन्या प्रत्यक्ष हो गई। उसे देखते ही युवक का दिल धड़-धड़ करने लगा। सुल्तान और सुल्ताना की अनुमति पर उन दोनों का विवाह हुआ।

युवक का भाग्य इसके साथ खतम नहीं हुआ। सुल्तान भी अपने वज़ीर की दुष्ट बुद्धि जान गया। उसने उसको देश निकाले का दण्ड दिया और इस युवक को वज़ीर नियुक्त किया।

खलीफ़ा की सम्पत्ति

जिस तरह अकबर के दरबार में तानसेन था, उसी तरह हसन अल रशीद के दरबार में, ईषाक अल नदीम नाम का प्रसिद्ध गवैय्या था। वह मोसूल का था। खलीफ़ा उसको अपना प्राण मित्र समझता। उसने अपने खूबसूरत महलों में से एक महल उसको दिया और उससे महल की दासियों को, गाना बजाना सिखाने के लिए कहा। उन दासियों में, जो कोई नैपुण्य पा लेती, उसको ले जाकर, वह खलीफ़ा के सामने गवाता। यदि खलीफ़ा को उसका गाना पसन्द आता, तो उसको सीधे खलीफ़ा के अन्तःपुर में भेजा जाता। यदि पसन्द न आता, तो फिर उसको कुछ और अभ्यास करने के लिए वापिस भेजा जाता।

एक दिन खलीफ़ा का मन कुछ ऊबा ऊबा-सा था। उसने अपने वज़ीर जाफ़र को ईषाक, मस्रूर और यूनस नाम के मुन्शी को बुलवाया। जब वे आये, तो उन्होंने देखा कि खलीफ़ा ने मामूली कपड़े पहिने हुए थे। उसने उनको भी वैसे ही कपड़े पहिनने के लिए कहा। सब ने कपड़े बदले। फिर वे चुपचाप राजमहल से निकले। छोटी नाव में सवार होकर वे तिग्रिस नदी में, अल्ताफ़ नामक जगह पहुँचे। वहाँ वे नाव से उतरे।

जब वे हँसते हँसते बातें करते आ रहे थे, एक सफेद दाढ़ीवाले बूढ़े ने आकर, ईषाक का हाथ लेकर आँखों पर लगा लिया। ईषाक ने उस आदमी को पहिचान लिया। वह बूढ़ा राजमहल में,

पुरुष दास और स्त्री दासियों को बेचा करता था। ईषाक के पास, उसके भेजी हुई कई दासियों ने संगीत सीखा था।

बूढ़ा खलीफ़ा को न पहिचान सका। फिर भी उसने औरों से माफ़ी माँगकर ईषाक से कहा—"हुज़ूर, आपको देखने के लिए मैं, बहुत दिनों से सोच रहा हूँ। मैं दरबार में हाजिर होने की सोच रहा था, कि आप ही मिल गये। आप से एक बात कहनी है। मेरे गुलाम के घर में एक लड़की है। वाद्य संगीत में वह पहिले ही प्रवीण है। यदि उसने कुछ दिन आपके यहाँ शागिर्दी की तो उसकी बराबरी गाने में इस दुनियाँ में कोई न कर सकेगा। यही नहीं, वह बड़ी खूबसूरत भी है। आप एक बार आकर उसका गाना सुनिये। यही मेरी प्रार्थना है। अगर आपको उसका गाना पसन्द आया, तो तुरत उसको मैं आपके महल में भेज दूँगा। अगर आपको न जँची, तो मैं उसे किसी और व्यापारी को बेच दूँगा।"

ईषाक ने एक बार खलीफ़ा की ओर इशारा किया। फिर उसने बूढ़े से कहा—"आप आगे चलिये, गुलामों के घर में

उस लड़की को तैयार रखिये, हम पीछे ही आते हैं।"

बूढ़ा चला गया। खलीफ़ा और उसके साथी, उसके पीछे पीछे चले। यद्यपि उनके लिए यह कोई विचित्र अनुभव नहीं था, तो भी वे उस मछियारे की तरह खुश हुए, जो जाल में पहिली पहल मछली को फँसा पाता है। वे गुलामों के घर पहुँचे और उस जगह कदम रखा, जहाँ वे बेचे जा रहे थे। वे जब वहाँ बैठे हुए थे, तो बूढ़े ने एक लड़की को लाकर, बड़ी पीठिका पर बिठाया। वह अपने बाजे पर मीठा-मीठा गाने लगी।

यह गाना सुन खलीफ़ा बड़ा खुश हुआ। "वाह, क्या आवाज़ है! क्या गला है!" फिर उसे अपना वेष याद हो आया और चुप बैठ गया। ईपाक ने भी उसकी तारीफ़ करनी चाही। इतने में वह ईपाक के पास भागी भागी आयी। उसके हाथ उठाकर, उसने अपने माथे पर लगाये। "गुरु, आपके सामने हाथ नहीं चलते। आवाज़ नहीं निकलती। मेरा बेड़ा पार लगाने की शक्ति बस आप में ही है, किसी और में नहीं है।" वह आँसू बहाने लगी।

उसका दुःख देखकर ईषाक को आश्चर्य हुआ और दया भी आयी। उसने उससे कहा—"क्यों? दुःखी होती हो? तुम कौन हो?" जब वह औरों को देखकर [illegible] कुछ बात न कर सकी, [illegible] खलीफ़ा की अनुमति लेकर उसको अलग ले गया।

वहाँ उसने अपना परदा हटाया और ईषाक को अपना मुँह दिखाया। उसका सौन्दर्य देखकर, ईषाक चकित रह गया। उसने धीमे से पूछा—"क्या चाहती हो? बताओ....?"

"मेरा दुःख भरा जन्म है। आपकी शिष्या बनने के लिए, मैं कई महीनों से तपस्या कर रही हूँ। जब कभी गुलाम बेचे जाते रहे, मैं जैसे तैसे बिना बिके बचती रही। देश विदेशों में फैली आपकी कीर्ति सुनकर, मैं आपकी शिष्या बनना चाहती हूँ।"

इतने में बूढ़ा वहाँ आया। ईषाक ने उससे पूछा—"इस लड़की का क्या दाम है? इसका नाम क्या है?"

"इसका नाम, तुफ़हा अल कुलाब और इसके दाम है कम से कम दस हज़ार दीनार। मैंने इस दाम पर और व्यापारियों से सौदा किया है, अगर अब तक बेची नहीं गई है, तो इसका कारण दाम नहीं है, पर यह लड़की ही है। जब सौदा पटने को ही होता, तो यह ऐसी बात [illegible] कहती कि बना बनाया सौदा बिगड़ जाता। मैं आपसे दस हज़ार दीनार से अधिक नहीं माँग सकता।" परन्तु इनसे मेरा खर्च भी न निकलेगा।

ईषाक ने हँसकर कहा—"खैर, तुम दुगना तिगुना कर दो, शायद इसका दाम ठीक यही होगा। आप इसे हमारे घर भेजकर, अपना धन ले जाओ।"

इसके बाद ईषाक वहाँ से खलीफ़ा के पास गया और जो कुछ हुआ था, उसे बता दिया।

बूढ़ा, उस लड़की को ईषाक के महल में ले गया और तीस हज़ार दीनार लेकर चला गया। ईषाक की दासियों ने, तुफ़हा को नहलाया, सजाया, संवारा। उसको कीमती गहने पहिनवाये। जरी का हल्का परदा भी पहिनाया। जो कुछ अलंकरण करना था, उन्होंने किया।

ईषाक घर वापिस आया। उस सजी संवारी लड़की को देखकर, उसने सोचा—"यदि इसने थोड़े दिन मेरे यहाँ अभ्यास किया, तो निश्चय ही यह खलीफ़ा के अन्तःपुर की ज्योति बनेगी। मुझे तो, ऐसा लगता है, जैसे यह इस लोक की स्त्री ही न हो।"

उसने ऐसी व्यवस्था की कि उसको अभ्यास की सब सुविधायें मिलें, सब तरह की सेवा शुश्रुषा उसकी हो। कुछ हफ़्ताह उसको किसी चीज़ की कमी न थी।

एक दिन उसके साथ की और शिष्यायें वन विहार के लिए निकलीं। महल में कोई न था। उस समय तुफ़हा उस कमरे में गई, जहाँ संगीत की साधना की जाती थी। वह अपनी जगह बैठ गई और अपना वाद्य लेकर गाना गाने लगी। उसके हाथ और कंठ से अमृत बहने लगा।

वह जब यों गा रही थी, तो ईषाक खलीफ़ा के पास कुछ देर रहकर, घर वापिस आया। उसने उसका संगीत सुना, तो उसे लगा, जैसे कोई दैवीय संगीत सुन रहा हो। वह अनायास वाह वाह करने लगा। उसकी आवाज़ सुनते ही, तुफ़हा उठकर उसके पास गई। जब उसको उदास, दीवार से सटा, छाती पर हाथ

रखा, देखा तो उसने पूछा—"आपकी तबीयत तो ठीक है!"

"तुम्ही क्या हॉल में गा रही थी!" ईषाक ने पूछा।

"हाँ, मैं ही वह बदकिस्मत स्त्री हूँ।" उसने कहा।

ईषाक ने सिर पकड़कर गुनगुनाते सोचा—"क्या नौबत आयी है, ईषाक! सोचा था कि तुम से कोई बड़ा गवैय्या नहीं है। अब पता लगा कि तुम्हें कुछ नहीं आता जाता, जो कुछ तुम करते आये हो वह बिल्कुल गलत था।" उसने उसके हाथ लेकर अपने आँखों पर रखना चाहा। तुफ़हा ने झट अपना हाथ खींचकर कहा—"यह क्या गुरु, मैं तो आपकी गुलाम हूँ।"

"ऐसा न कहो, ईषाक का गुरुत्व खतम हो गया है। तुम्हारे गाने के सामने मेरा गाना बेकार है। मानो कोकिल के गाने के सामने कौव्वे का काम काम करना। आज ही तुम्हें खलीफ़ा के सामने हाजिर करूँगा। खलीफ़ा तुमको स्त्रियों की रानी बना देंगे। तब तुम ईषाक को न भूल जाना।" ईषाक ने कहा।
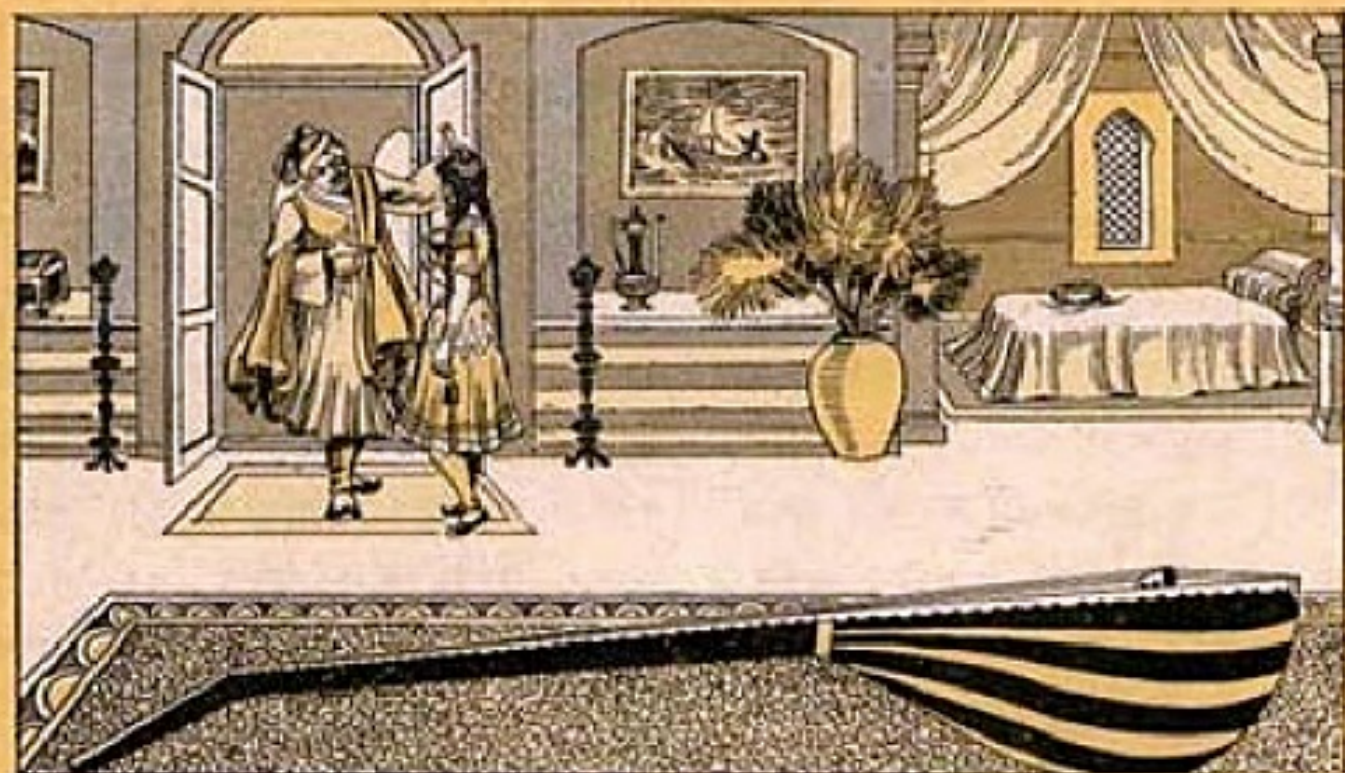
उसके ताली बजाते ही दासियाँ भागी भागी आयीं। उसने उनको तुफ़हा को सजाने के लिए कहा। उसे उन्होंने खूब सजाया। फिर वह भी उसके पीछे पीछे खलीफ़ा के पास गया। एक नीग्रो लड़के से एक बाजा बजाता, ईषाक उनसे कुछ देर पहिले गया। वह तुफ़हा को बाहर के कमरे में छोड़कर खलीफ़ा के कमरे में गया। "हुज़ूर, जन्नत से आयी हुई गायिका तुफ़हा को आपके पास लाया हूँ। वह अब मेरी शिष्या नहीं है, पर मेरी गुरु है।"

"क्या यह सुन्दरी वही है, जिसको हमने उस दिन गुलामों के घर में देखा था!" खलीफ़ा ने पूछा।

"हाँ, हुज़ूर!" ईषाक ने कहा।

खलीफ़ा ने, उसको उसे अन्दर लाने की अनुमति देकर जाफ़र से कहा—"क्या बात है, ईषाक आज किसी और की तारीफ़ कर रहा है!"

ईषाक अपनी शिष्या को, हाथ पकड़कर अन्दर लाया। उसने खलीफ़ा को सलाम किया और अपना परदा हटाया। उसका सौन्दर्य देखकर खलीफ़ा मूर्छित-सा हो

गया। जाफ़र और मस्रूर को भी अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। खलीफ़ा अपनी जगह से उठकर आया और उसने सबको यह दिखाने के लिए कि वह तब से उसकी सम्पत्ति है, उसके मुँह पर परदा ढका। फिर उसने उसको बैठने के लिए कहा—"तुफ़हा, तुम्हारे आने से मेरे महल में चार चान्द लग गये हैं। तुम अपना संगीत सुनाओ।"

नीग्रो लड़के के हाथ से उसने वाद्य लिया, खलीफ़ा के सिंहासन के पास ही, वह नीचे बैठ गयी। कुछ देर आलापन करने के बाद उसने एक गीत गाया।

खलीफ़ा इतना खुश हुआ कि वह सिंहासन पर न बैठा रह सका, वह भी उसकी बगल में बैठ गया। "तुफ़हा, तुम सचमुच अल्लाह की देन हो।" ईषाक जो कुछ तुमको इसके बारे में कहना था, तुमने नहीं बताया। सचमुच तुम इसके सामने कुछ नहीं हो।"

"इसमें कोई झूट नहीं है। जब वह अकेली गा रही थी तभी मैं यह जान गया था।" ईषाक ने कहा।

तुफ़हा ने एक और गीत गाया। खलीफ़ा के आँखों से आनन्दाश्रु बहने लगे। उसने उन्हें छुपाने का भी प्रयत्न न किया। उसने मस्रूर से कहा—"तुम अपनी मालकिन को अन्तःपुर के सब से अच्छे कमरे में ले जाओ और ऐसा इन्तज़ाम करो कि उनको किसी प्रकार की कमी न हो।" उसने ईषाक को लाख दीनारें दीं और बहुत से शाल भी दिये।

[अगले अंक में समाप्त]

हत्या का दोष

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम ऐसी मन्त्रशक्तियों में उलझ गये हो, जिसे मामूली आदमी नहीं समझ सकते हैं। तुम्हें देखकर मुझे सहमित्र की कथा याद आ रही है। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

सहमित्र सिन्धु तट का रहनेवाला था। जब वह युवक ही था कि वह विन्ध्यारण्य के प्रान्त में आया। एक दिन वह करिकुञ्ज के पास जंगल में यूँहि टहलने गया। उसने सुन रखा था कि वहाँ शेर थे और कुछ स्थल शापग्रस्त भी थे। जो लोग वहाँ रहते थे, वे गाँव छोड़कर कभी घूमने

नहीं जाते थे। और अगर कभी एक गाँव से दूसरे गाँव उनको जाना भी पड़ता तो रास्ते से हटकर जंगल में न जाते।

जो कुछ सहमित्र ने सुना था, उसने उस पर विश्वास नहीं किया। वह साहस करके जंगल में घुसा। चूँकि तब सरदियाँ थीं, इसलिए पेड़ हरे-भरे थे। ज़मीन पर हरी कालीन-सी बिछी हुई थी। फूल खिले हुए थे। वन महक-सा रहा था। उसे वह प्रदेश बहुत सुन्दर लगा।

वह एक हरी भरी जगह देखकर लेट गया और ऊपर आकाश में रुई-से बादल देखता उस ठंडी बयार में सो गया। वह यकायक ऐसा उठा, जैसे किसी ने उसे मारा हो। दुपहर ढल चुकी थी और उसे ज़ोर से भूख लग रही थी। जब उसने पेट पर हाथ फेरा तो उसके हाथ में बाल आये। जब उसने हाथ उठाकर देखे तो उसे हाथों पर शेर के पंजे दिखाई दिये। हाथ पर पीले रंग के बाल थे और उन पर काली लकीरें थीं। सहमित्र जान गया कि वह शेर बन गया था।

पास के पोखर में जाकर उसने जब अपनी शक्ल देखी तो वह जान गया कि उसे भ्रम नहीं हो रहा था, वह सचमुच शेर हो गया था।

इस परिवर्तन पर पहिले सहमित्र को इतना दुःख नहीं हुआ। यही नहीं, उसे यह बड़ा विचित्र अनुभव-सा लगा। जब उसने हाथ पैर हिलाकर देखा तो उसे लगा जैसे उसके अंगों में असाधारण बल आ गया हो। वह इधर उधर भागा। पत्थरों और टीलों पर चढ़ा और उन पर से उतरा।

यह सब तो ठीक था, पर सहमित्र की भूख बढ़ती ही जाती थी। उसने किसी

जानवर का शिकार करने की सोची, पर आसपास कहीं कोई जानवर नहीं दिखाई दिया।

यह सोच कि करिकुञ्ज ग्राम के पास कुछ खाने को मिल सकेगा, वह वहाँ गया और झाड़ी के पास छुपकर बैठ गया।

कुछ देर बाद उसने एक स्त्री को पगडंडी से जाते देखा। उसने यह तो सुन रखा था कि विन्ध्य प्रदेश की स्त्रियाँ सुन्दर होती थीं, पर उसने तब तक किसी स्त्री को समीप से न देखा था। इस स्त्री को समीप से देखने के लिए वह पगडंडी के पास जाने लगा। इतने में उस स्त्री ने उसे देखा—"अरे बाप रे बाप, शेर" वह चिल्लाई, गाँव में भाग गई। उसे तब पता लगा कि जब तक वह इस रूप में था, उसके पास कोई मनुष्य नहीं आयेगा।

पर उसे भूख इतनी लग रही थी कि वह इस बात पर सोच भी न सकता था। जब अन्धेरे तक उसे खाने को कुछ न मिला, तो वह गाँव में गया। गाँव में सब घर बन्द थे, कहीं कोई बछड़ा भी न दिखाई दिया। यह जानकर कि पास ही शेर घूम रहे थे, लोग होशियार हो गये थे।

वह भी क्या करता! वह भूखा फिर जंगल में चला आया, और एक जगह लेटकर सो गया। जब वह उठा, तो सवेरा हो रहा था। उसने दूर के रास्ते पर लोगों के आने जाने की आहट भी सुनी। उसे मनुष्य को मारकर खाना बहुत बुरा लगा। यदि खाना न मिलता, तो उसे मरने की नौबत आती।

वह चुपचाप रास्ते के पास आया। एक बड़े पेड़ के पीछे छुप गया। उसे

घृणा हुई। वह मनुष्य को मारने पर तो नहीं पछताया, पर उसे अपनी ज़िन्दगी पर नफ़रत हो गई। उसे शेर बने अभी एक दिन भी न हुआ था, इस थोड़े समय में ही वह जान गया कि बड़े शेर के रूप में कोई आनन्द नहीं था।

उसे यह समस्या सताने लगी कि फिर कैसे मनुष्य बना जाये। उसे एक बात सूझी—क्यों न फिर वहीं जाकर लेटा जाय, जहाँ लेटने से वह शेर हो गया था! कोशिश करने में कोई बात न थी, इसलिए वह उस जगह को ढूँढ़ता गया, फिर वहीं वह सो गया।

उसका ख्याल ठीक था, जब थोड़ी देर बाद फिर उठा, तो वह पहिले की तरह मनुष्य था। उसने एक लम्बी साँस छोड़ी, गाँव में अपनी जगह गया।

जिसकी जगह पर ठहरा था, उसने उससे पूछा—"आ गये बाबू! कल इस समय गये थे, जब वापिस न आये, तो मुझे डर लगा कि कहीं आप शेर के शिकार तो नहीं हो गये थे। शायद आप नहीं जानते कि कल शाम को गाँव के पास शेर आया

थोड़ी देर बाद हँसते लोगों का आना सुनाई दिया। तीन आदमी करिकञ्ज की ओर आ रहे थे। उनमें एक बड़ा मोटा ताज़ा था। वह शायद कोई कर्मचारी था। बाकी दोनों उससे बड़े विनयपूर्वक बातें कर रहे थे। ठीक मौका देखकर सहमित्र उस मोटे ताज़े आदमी पर लपका और उसको पकड़कर पहाड़ों की तरफ़ घसीट ले गया। बाकी दोनों ज़ोर से सिर पर पैर रखकर भाग गये।

कुछ भी हो, सहमित्र की भूख जाती रही। पर उसे अपने इस नये रूप पर

था। आज सवेरे एक अधिकारी गाँव की ओर जा रहे थे कि वह उसे उठाकर ले गया।"

"वह शेर मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।" सहमित्र ने इस तरह कहा, जैसे उसे कोई फ़िक्र न हो।

वह जिस काम पर आया था, उसे पूरा करके अपने देश की ओर गया। बहुत साल हो गये। वह काशी के राजा के यहाँ नौकरी करने लगा। उसे अच्छा पद भी मिल गया। पर उसने अपने शेर के रूप के बारे में किसी से कुछ न कहा। वह भी धीमे-धीमे इस अनुभव को भूलने लगा।

एक दिन गंगा के किनारे राजकर्मचारी मित्रों से बात करते उसने अपने बचपन का अनुभव सुनाकर, यह निरुपित करना चाहा कि पशुओं का जीवन अधिक सुखी न था। वह कह ही रहा था कि कैसे वह एक आदमी को मारकर खा गया था— तो उनमें से एक युवक ने तल्वार निकाल कर गुस्से में कहा—"नीच कहीं का! तो तुम ही मेरे पिता को खा गये थे! तुम्हें अभी मारकर, अपने पिता की

हत्या का बदला लूँगा।" वह उसकी ओर लपका।

सहमित्र यह देख दंग रह गया। "मुझे क्षमा करो। मैं उस समय मनुष्य, न था। यही नहीं, मैं भूख से मरा जा रहा था। फिर मैं यह भी न जानता था कि वे तुम्हारे पिता थे।" उसने कहा।

वह युवक क्षमा से बिल्कुल सन्तुष्ट न हुआ। औरों ने सहमित्र के प्राण तो बचा दिये, पर वे यह न कह सके कि उस युवक का क्रोध अनुचित था। "तुम्हें

कहीं न कहीं, कभी न कभी मार करके, बदला लूँगा।" यह प्रण करके वह युवक अपने घर चला गया। मित्रों की सलाह पर सहमित्र उसी दिन काशी राज्य छोड़कर अपने देश चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। सहमित्र नर हत्या का दोषी है कि नहीं! उस युवक को उसे मारकर अपने पिता की हत्या का बदला लेने का अधिकार है कि नहीं! इस प्रश्नों का तुमने जान-बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"शेर का मनुष्य को मारना स्वाभाविक है। मनुष्य का मनुष्य को मारना अस्वाभाविक है। उसका व्यक्तिगत कारण होता है, शेर किसी भी मनुष्य को मारकर खाता है। वह नर जाति का शत्रु है। इसलिए कोई भी मनुष्य उसको मार सकता है। शेर की सुनवायी और सज़ा अलग-अलग नहीं होती। मनुष्य को मारनेवाले मनुष्य की सुनवायी और सज़ा अलग-अलग होती है। अगर जैसे तैसे वह आदमी उनसे बच गया, तो मारे गये आदमी की तरफ़ वाले ही उससे बदला लेते हैं। सहमित्र उस तरह का हत्यारा न था, इसलिए वह निर्दोष था। उस युवक के यह कहने में कि वह अपने पिता की हत्या का बदला ले रहा था, कोई मतलब नहीं है।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर, पेड़ पर जाकर बैठ गया। [कल्पित]

वल्कलचीर की कथा

पोतन नगर का कभी सोमचन्द्र राजा था, उसकी पत्नी का नाम धारिणी था। उनके एक लड़का था, जिसका नाम प्रसन्न चन्द्र था। एक दिन धारिणी अपने पति के सिर पर कंघी फेर रही थी, तो उसने एक सफ़ेद बाल दिखाकर, मज़ाक किया।

"अब मुझे राज्य नहीं करना चाहिए। अब भी क्या हो गया है! मैं जंगल में जाकर ऋषियों की तरह रहने लगूँगा।" उसने कहा। धारिणी पति को छोड़कर नहीं रह सकती थी। उसने कहा—"अगर आप जंगल गये, तो मैं भी आऊँगी।"

सोमचन्द्र अपने लड़के प्रसन्नचन्द्र का राज्याभिषेक करके, अपनी पत्नी के साथ बन में गया और तपस्या करने लगा। धारिणी कुछ समय बाद गर्भवती हुई। उसने यथा समय एक लड़के को जन्म दिया। उसने उसका नाम वल्कलचीर रखा।

थोड़े समय बाद धारिणी गुज़र गई। सोमचन्द्र वल्कलचीर को भैंस का दूध देकर पालने लगा। जब से उसे होश आया था वल्कलचीर मुनियों को ही जानता था।

प्रसन्नचन्द्र जान गया कि ऋषि का जीवन व्यापन करनेवाले पिता के पास बन में, उसका एक भाई भी बड़ा हो रहा था, उसने जैसे भी हो, भाई को अपने यहाँ लाने का निश्चय किया। इसके लिए प्रसन्नचन्द्र ने कुछ वेश्याओं को बुलाया, उन्हें आश्रमवासियों के कपड़े पहिनवाये। फल और मिठाई देकर, जैसे भी हो, वल्कलचीर को आकर्षित करके लाने के लिए कहा। वेश्यायें वल्कलचीर को आश्रम

में अकेला था, उससे मिलीं। उसे फल और मिठाइयाँ वगैरह दीं। वल्कलचीर ने सोचा कि वे भी ऋषि थे।

वेश्याओं ने उससे कहा—"हमारा आश्रम पोतन के पास है। हमें वहाँ बहुत आराम है। यदि हमारे साथ आये, तो रोज तुम्हें इसी प्रकार का आहार मिलेगा।" वल्कलचीर की पोतन आश्रम देखने की इच्छा प्रबल हो गई। पर इतने में सोमचन्द्र को आता देख, वेश्यायें जंगल में भाग गईं।

वल्कलचीर जब उनको खोजता, जंगल के रास्ते गया, तो उसे एक गाड़ी आती दिखाई दी। वल्कलचीर उस गाड़ी पर सवार हो गया और रास्ते भर गाड़ीवाले से पूछता रहा—"ये ऋषि कौन हैं? उस कुटीर में कौन से मुनि रहते हैं? उस आश्रम का नाम क्या है?" उसके नादानी भरे प्रश्नों को सुनकर, गाड़ीवाला और उसके पत्नी खूब हँसे।

रास्ते में एक चोर ने गाड़ी रोकी। पर गाड़ीवाला कोई मामूली आदमी न था। उसने चोर के एक लाठी जो जमाई, तो चोर छटपटाता गिर पड़ा। गाड़ीवाले ने चोर के पास जो कुछ धन था, वह ले लिया, फिर गाड़ी पर सवार होकर, सीधे पोतन नगर गया।

गाड़ी के पोतन नगर में पहुँचते ही वल्कलचीर से कहा—"यह ही पोतनाश्रम है। उस आश्रम में अगर कुछ चाहोगे तो इनका होना ज़रूरी है, इसलिए इन्हें अपने पास रखो।" यह कहकर गाड़ीवाला उसे कुछ धन देकर, अपने रास्ते चला गया।

वल्कलचीर उस आश्रम को देखकर, बड़ा चकित हुआ। उसने कभी न सोचा था कि कहीं ऐसा आश्रम होगा। जो कोई उसे रास्ते में दिखाई देता, वह उससे

कहता—"महामुनि नमस्कार।" सब गलियों में घूम-घामकर, वह एक आँगण में आया। वह राजनर्तकी का घर था। घर की मालकिन से वल्कलचीर ने कहा—"जी महाशय, मुझे रहने के लिए एक कुटीर दीजिये।" फिर उसने वह धन उसके हाथ में रख दिया, जो उसे गाड़ीवाले ने दिया था।

"अच्छा...." यह कहकर उसने वल्कलचीर को अच्छी तरह नहलाया, धुलाया। अच्छे कपड़े पहिनवाये, उसका अपनी लड़की से विवाह करने की भी तैय्यारी करने लगी। वल्कलचीर ने भी कोई आपत्ति न की, जो कुछ उसने करने के लिए कहा, उसने किया, पर उसे विवाह के गीत सुनकर आश्चर्य हुआ। मंगल वाद्य सुनकर भय भी हुआ।

इस बीच वेश्याओं ने प्रसन्न चन्द्र के पास जो कुछ हुआ था, वह सुनाया। वह यह जानकर बड़ा झुँझलाया कि उनके साथ उसका भाई नहीं आया था। वह झुँझला तो रहा ही था, राजनर्तकी के यहाँ, ढोल दमाके का शोर सुनकर वह और झुँझलाया, जब उसने पूछ ताछ की कि क्यों यह ढोल दमाका बजाया जा रहा था, तो उसे असली बात मालूम हो गई। राजनर्तकी का होनेवाला दामाद, राजा का भाई, वल्कलचीर ही था।

प्रसन्न चन्द्र अपने भाई को अपने घर ले आया। उसने वल्कलचीर को राज्य दिया और अच्छी-सी राजकुमारी को खोजकर उसका उसके साथ विवाह भी कर दिया।

वल्कलचीर अपने भाई के यहाँ रहने के कुछ दिन बाद, सैनिक उस गाड़ीवाले को चोर बताकर पकड़ लाये। हुआ यह

कि गाड़ीवाले ने चोर के पास से ली हुई कुछ चीज़ों को बेचा। जो उन्हें खो चुके थे, उन्होंने उन चीज़ों को पहिचाना, फिर पता लग गया कि फलाने गाड़ीवाले ने उन्हें ली थीं। उनके शिकायत करने पर सैनिक, उस गाड़ीवाले को पकड़कर राजा के सामने लाये। वल्कलचीर अपने भाई के बगल में था। उसने गाड़ीवाले को पहिचान लिया और यह सुनकर कि वस्तुतः क्या हुआ था, गाड़ीवाले को छुड़ा दिया।

बारह वर्ष आराम से जिन्दगी गुज़ारने के बाद, वल्कलचीर को अपने पिता की याद हो आयी। इस बीच वह बूढ़ा, अपने लड़के के लिए रोता रोता, दोनों आँखें खो बैठा था। बाकी मुनि उसकी परवाह किया करते थे। वल्कलचीर के बारे में खोज करवाकर, उससे उन्होंने कहा—"आप शोक न कीजिये। आपका वल्कलचीर अपने भाई के पास पहुँच गया है और सुख से रह रहा है।"

पिता की बात याद आते ही, वल्कलचीर पछताने लगा। वह पिता को देखने के लिए निकल पड़ा। उसके साथ प्रसन्न चन्द्र भी निकला। अरण्य में घुसकर, आश्रम के रास्ते में, जो जो जगह वल्कलचीर जानता था, उसने उन्हें अपने भाई को दिखाया। सोमचन्द्र की आँखों से, यह जानते ही कि उसका लड़का आ रहा था, आँसुओं की धारायें बहने लगीं। ऐसा करने से, उसकी खोई हुई दृष्टि उसको फिर मिल गई। यह चमत्कार देखकर वहाँ उपस्थित मुनियों को बड़ा आश्चर्य हुआ।

राक्षस - सीढ़ियाँ

पश्चिमी समुद्र तट पर हज़ारों वर्ष पहिले एक गाँव में एक मुखिया रहा करता था, उसके एक लड़का हुआ। उसने उसका नाम ललित रखा। ललित ने बुटपन में ही अपनी बुद्धिमत्ता और चातुर्य से सबको प्रभावित किया, इस कारण वह सबका प्रिय पात्र था।

ऐसा ललित एक दिन जब वह सात साल का होनेवाला था, यकायक गायब हो गया। एक साल तक गाँव के लोग उसे खोजते रहे, पर किसी को न मालूम हुआ कि वह कहाँ चला गया था। इसलिए लोगों ने तय कर लिया कि वह फिर न लौटेगा।

उस गाँव में सब का स्नेह पात्र एक लुहार भी था। उसका नाम चैमार था। कुल्हाड़े, फावड़े, खुरपे, गाड़ी के पहिये आदि बनाने में वह बड़ा निपुण था। यही नहीं, वह सपनों का मतलब भी सही सही बता देता था। गाँव में किसी को कोई अजीब सपना आता, तो उसका मतलब जानने के लिए वे पहिले लुहार के पास जाते। यदि गाँव में कुछ होता और उसमें चैमार न होता, तो मज़ा न आता।

ललित के गये हुए तीन साल हो गये। एक दिन रात को, लुहार ने उसको सपने में देखा। वह एक सफेद घोड़े पर सवार था। उसने लुहार से कहा—"इतने दिनों से, मैं जृम्भकासुर का नौकर था। अब मेरी नौकरी का समय हो गया है। अब तुम आकर मुझे ले जाओ। मैं राक्षस पहाड़ पर हूँ।"

"यह सब तो सपना ही है, कैसे इसको सच माना जाये!" लुहार ने सपने में ललित से पूछा।

"यही तुम्हारे लिए निशानी है।" ललित ने कहा। लड़का अभी यह कह ही रहा था कि उस सफ़ेद घोड़े ने, जिस पर वह सवार था, उसके माथे पर दुलत्ती झाड़ी।

इस चोट के कारण, बैमार नींद से उठा। उसने अपने मुँह पर हाथ फेरा। माथे पर अभी दर्द हो रहा था, जब शीशे में देखा, तो उसको माथे पर घोड़े के खुर का निशान दिखाई दिया। लुहार ने सब के सपनों का तो अर्थ बताया था, पर उसे अपना ही सपना समझ में न आया।

यह सच था कि समुद्र के पास ही एक पहाड़ था। उस पर नीचे से ऊपर तक सीढ़ियाँ थीं। पर उनका सीढ़ियों के तौर पर कोई मनुष्य उपयोग नहीं कर सकता था। अगर छत पर आसानी से पैर रखनेवाले राक्षस सचमुच हों, तो वे ही उन सीढ़ियों पर चढ़ सकते थे। इसलिए ही सब उन्हें राक्षस सीढ़ियाँ कहा करते थे। कहा जाता था कि द्वापर युग में जृम्भकासुर नाम का कोई राक्षस था, वह उन सीढ़ियों से पहाड़ के ऊपर जाया करता था और पहाड़ के नीचे की सीढ़ी से एक कदम में समुद्र तट पर आया करता। साधारण आदमी का उस पहाड़ तक जाने के लिए नौकाओं में जाना पड़ता।

लुहार बैमार ने अपने सपने पर विश्वास किया। जहाँ तक सम्भव हो, राक्षस की नौकरी से ललित को छुड़ाने का निश्चय किया। भले ही लड़के की रक्षा न हो सके, यह तो देखा जाये कि सपने में कितनी सचाई है।

वह शाम तक तो घर में रहा, फिर वह निकल पड़ा। जाते समय शायद काम में आ जाये, यह सोचकर, उसने साथ एक लाठी भी ली। वह सीधे अपने दोस्त मछियारे के पास गया और उसने उससे अपने सपने के बारे में कहा। सब सुनकर मछियारे ने कहा—"अच्छा, पहाड़ तक पहुँचने के लिए मेरी नाव दे दी। मैं स्वयं तुम्हें वहाँ पहुँचा दूँगा।"

उस दिन उसने मछियारे के यहाँ ही खाना खाया। फिर वे नौका पर निकल पड़े। अन्धेरी रात थी। समुद्र शान्त था। आकाश साफ़ था। लुहार ने यह भी न सोचा कि वह एक भयंकर काम पर जा रहा था। थोड़ी देर में नाव पहाड़ के पास राक्षस सीढ़ियों के समीप पहुँची।

अब तक लुहार जानता था कि क्या करना था, पर इसके बाद क्या करना होगा, उसे न मालूम था। अगर राक्षस कहीं हैं, तो पहाड़ के अन्दर ही होंगे। पहाड़ के अन्दर जाने के लिए एक द्वार था। यह ज़रूर कहा सुना जाता था कि एक माया द्वार था और वह आधी रात को खुलता था। यह बात सच थी या झूट, किसी को नहीं मालूम था।

"सपने पर विश्वास करके यहाँ आये हैं, हम से मूर्ख भी कहाँ कोई होगा।" लुहार ने अपने मित्र से कहा।

"यह तो, तुम ही जानो।" मछियारे ने कहा।

ठीक उसी समय पहाड़ के नीचे पानी की सतह पर, पहाड़ के बीच अस्पष्ट प्रकाश दिखाई दिया। उस प्रकाश में लुहार को एक विशाल गुफ़ा का द्वार दिखाई दिया। वह लाठी अपने कन्धे पर रखकर, हिम्मत

से गुफ़ा की ओर गया। जब पास जाकर देखा, तो गुफ़ा साफ़ दिखाई दे रही थी। परन्तु भयंकर और भ्रामक थी। उसमें मनुष्य के मुखों के भाग, एक दूसरे में पिरोकर रखे हुए थे।

यह देख लुहार को डर लगा। लुहार गुफ़ा के अन्दर गया। गुफ़ा के द्वार पर जो प्रकाश था, वह अन्दर न था। वहाँ अन्धकार था। गुफ़ा में कितने ही मोड़ थे, टटोलता-टटोलता वह मोड़ से गया। फिर इतना अन्धेरा हो गया कि हाथ-हाथ को न दिखाई देता था।

"यदि इस गुफ़ा में कुछ और दूर गया, तो वापिस आना असम्भव है। इसलिए पीछे जाना ही अच्छा है।" अभी वह सोच ही रहा था कि पीछे से पहाड़ में ध्वनि हुई। गुफ़ा द्वार बन्द हो गया होगा। अब मरे या जीयें, आगे जाने में ही बहादुरी थी, यह सोचकर वह आगे बढ़ा। दूर उसे कहीं टिम-टिमाता दीप-सा दिखाई दिया।

लुहार उस दीये की ओर चल दिया। अब रास्ता सीधा था, कहीं कोई मोड़ न था। वह बहुत दूर चलकर, एक विशाल प्राँगण में पहुँचा। उसकी पत्थर की छत से एक दीया जल रहा था। उसके नीचे पत्थर की बेन्च थी। उसके नीचे ताड़ से बहुत से राक्षस चुपचाप निश्चल बैठे थे। उनको देखते ही लुहार का कलेजा थम-सा गया।

राक्षसों में मुख्य दिखाई देनेवाले एक राक्षस ने लुहार को देखकर, कड़वी आवाज़ में कहा—"क्या चाहिए?"

यह आवाज़ सुनते ही मानों लुहार का खून पानी पानी हो गया। फिर भी उसने हिम्मत करके कहा—"ललित को ले

जाने के लिए आया हूँ। उसकी नौकरी का समय खतम हो गया है न!"

"किसने भेजा है तुमको!" बड़े राक्षस ने फिर पूछा।

"मैं ही चला आया हूँ।" लुहार ने कहा।

"तो मेरे नौकरों में से उसे पहिचान कर ले जाओ। यदि तुम पहिचान न सके, तो तुम जीते जी वापिस नहीं जा पाओगे।" कहता बड़ा राक्षस एक और प्रांगण की ओर चला। वहाँ बहुत से दीप थे। सैकड़ों लड़के थे। किसी की भी उम्र सात साल से अधिक न थी। सभी ने एक तरह की हरी पोशाक पहिन रखी थी। उनमें ललित को कैसे पहिचाना जाय, यह लुहार को न सूझा।

"ललित को पहिचान कर ले जाओ। तुम्हें एक ही मौका मिलेगा, दूसरा मौका नहीं दिया जायेगा।" राक्षस ने कहा।

लुहार वेमार ने सब लड़कों को एक सिरे से देखा। पर वह जान गया कि वह ललित को नहीं पहिचान सकता
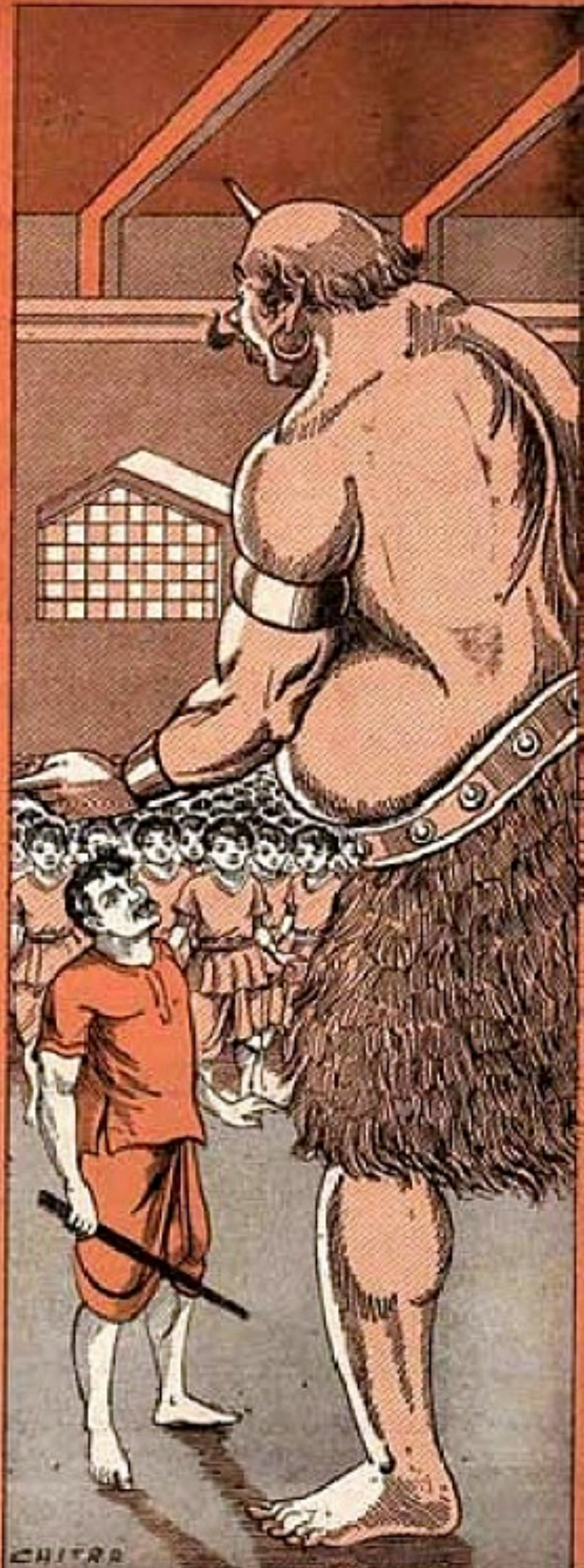
था। उसने राक्षस को मनाने के लिए कहा—"ये नौकर, बिना हवा, पानी के ही कितने तन्दुरुस्त मालूम होते हैं। आप यानि इनकी अच्छी तरह देख-भाल कर रहे हैं।"

"यह तो ठीक है, तुमने ठीक ही देखा है। देखें, तुम्हारा हाथ।" कहकर उस राक्षस ने हाथ बढ़ाया। उस हाथ को देख लुहार को डर लगा, उसने अपने हाथ की लाठी आगे की। राक्षस ने उसको लेकर, अपने हाथ में तागे की तरह झट लपेट लिया।

यह देखते ही सब लड़के ज़ोर से हँसे। लुहार ने झट हँसते लड़कों की ओर देखा। उनमें एक था, जो नहीं हँस रहा था। लुहार पास गया, उसके कन्धे पर हाथ डालकर, उसने कहा—"यह रहा ललित। इसे साथ ले जाने के लिए अनुमति दीजिए।"

तुरत दीप गुल हो गया, घना अन्धकार हो गया। बड़े-बड़े पत्थर गिरते दिखाई दिये। उस भयंकर परिस्थिति में भी लुहार ने जिस लड़के को छुआ था, उसे अपने हाथ में उठा लिया। इतने में वह बेहोश हो गया।

जब उसे होश आया, तो वह राक्षस सीढ़ियों के उपरले भाग पर था। लड़का उसके हाथ में था। उसी समय पूर्व में सूर्य उदय हो रहा था। वहाँ से बड़ी कोशिश करके, लड़के को उसके माँ-बाप के पास ले गया। ललित के फिर आने के बाद लोग कई साल, कैसे उसको बैमार लाया था इस बारे में कहानी बनाकर सुनाते रहे।

हनुमान शिंशुपा वृक्ष पर चढ़कर, चारों ओर देखने लगा। अशोक बन इन्द्र के नन्दनवन की तरह था। उसमें फल और फूलों के पेड़ थे। पक्षी और पशु थे। जगह-जगह चबूतरे थे। महल और कमलों के तालाब थे। सबसे अधिक अशोक वृक्ष थे।

कुछ दूरी पर ऊँचा सफेद मण्डप दिखाई दे रहा था। उसमें हज़ार खम्भे थे। मोती से जड़ी सीढ़ियाँ और सोने के चबूतरे थे। वह एक चैत्य के आकार में था।

फिर हनुमान को सीता दिखाई दी। उसने साड़ी पहिन रखी थी। उसके चारों ओर राक्षस स्त्रियाँ थीं। वह बहुत निर्बल हो गई थी। आहें भर रही थी। दयनीय प्रतीत होती थी।

न नहाने की वजह से शरीर पर धूल जमा थी। गहने न के बराबर थे। उसके बालों की एक चोटी-सी बन गई थी।

वह स्त्री सीता ही होगी, यह निर्धारित करने के लिए हनुमान ने यों सोचा। जब रावण उसको उठाकर ले जा रहा था, तो उस स्त्री में ये कुछ लक्षण दिखाई दिये, जो उन्होंने उसमें देखे थे। चन्द्रमा-सा मुँह था। लम्बी भौंहें। काले बाल, सुन्दर

उसके कान और हाथ के निशान यह बता रहे थे।

यही नहीं, सीता ने ऋष्यमूक पर्वत पर जो गहने गठरी में बाँध कर फेंक दिये थे, वे इनमें न थे। यही नहीं, जिस कपड़े में सीता ने गहने बाँधे थे और जो वस्त्र उसने पहिन रखे थे, एक ही थे। परन्तु साड़ी ज़रूर बहुत गन्दी हो गई थी। यह सब देख हनुमान बड़ा खुश हुआ और जान गया कि वह सीता ही था।

फिर सीता की हालत देखकर, हनुमान का दिल भारी-सा हो गया। जनक की लड़की, दशरथ की बड़ी बहू, कितने ही सुख और विलास उसको भोगने थे और अब वह इन भयंकर राक्षसों के बीच बैठकर, अविराम आँसू बहा रही है।

इस सीता के लिए राम ने कितने ही राक्षस मार दिये। इन्ही के लिए तो उन्होंने वाली को मार कर, सुग्रीव को राजा बनाया। इन्ही के लिए तो मैं समुद्र पार करके यहाँ आया हूँ! इनके लिए राम यदि ज़रूरत हुई, तो तीनों लोकों में उथल पुथल मचा देंगे। जब मुझ पराये को ही

कमर—सीता यद्यपि बहुत दुखी और निर्बल थी तो भी ये लक्षण उसमें साफ़ दिखाई देते थे।

यही नहीं राम ने भी सीता की कुछ निशानियाँ बताई थीं। इसलिए वह इस स्त्री को पहिचानने की पूरी कोशिश कर रहा था।

राम ने जिन आभूषणों के बारे में कहा था, उनको सीता ने पहिनना न चाहा और पास के पेड़ की टहनियों पर लटका दिया था। परन्तु उनमें कान और हाथ के आभूषण थे। यही नहीं,

सीता को देखकर इतना दुख हो रहा है, तो राम को उसे देखकर कितना दुख होगा—हनुमान ने शिंशुपा वृक्ष पर बैठकर सोचा।

रात काफ़ी गुज़र चुकी थी। राक्षस ब्राह्मणों ने वेदाध्ययन प्रारम्भ कर दिया था। मंगल वाद्य बजने लगे थे। रावण उनकी ध्वनि सुनकर उठा और सीता को याद करने लगा। तुरत उसने समस्त आभूषण धारण किये और चमकते अशोक वन की ओर निकला। उसके साथ सौ स्त्रियाँ थीं। उनमें से कई ने सोने के दीपस्तम्भ, कई चामर और कई पंखे पकड़े हुए थे। एक ने दायें हाथ में मोती मणियों से जड़ा मद्य-पात्र पकड़ रखा था। एक ने रावण के पीछे सीखवाली छतरी पकड़ रखी थी।

जब वे अशोक वन के द्वार के पास आये, तो पत्तों की आड़ में से हनुमान ने उनको देखा। रावण को अच्छी तरह देखने के लिए हनुमान नीचे की टहनी पर उतरा।

रावण अभी थोड़ी दूर ही था कि सीता भय से काँपने लगी। वह रोने लगी। कठिन भूमि पर बैठकर, भय के कारण रोती हुई सीता से रावण ने इस प्रकार कहा—

"मुझे देखकर क्यों डरती हो? यहाँ तुम्हें कोई किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकता! मैं तुम पर मुग्ध हूँ। पर तुम्हें मुझ पर कुछ भी प्रेम नहीं है। क्यों, यों दुखी होती हो? मेरा विश्वास करो। मुझे स्नेहबुद्धि से देखो, बिना साज श्रृंगार किये गन्दे कपड़े पहिनकर, तुम्हारा यों उपवास करना, तुम्हें बिल्कुल नहीं शोभता। बहे हुए पानी की तरह यौवन फिर वापिस नहीं आता। भोगों का अनुभव करो।

तुम-सी सुन्दरी इस संसार में कोई नहीं है। मेरा तुमने पाणिग्रहण किया, तो मैं तुम्हें बड़ी रानी बना दूँगा। सारा संसार जीतकर तुम्हारे पिता को उपहार में दे दूँगा। अभागा राजभार को खो-खाकर, जंगलों में फिरनेवाला राम जीवित है कि नहीं, इसमें सन्देह है। अगर वह जीवित भी है, तो वह तुमको देख भी नहीं सकता। जब हिरण्यकश्यप की पत्नी को इन्द्र उठा ले गया था, तो उसने नारद के द्वारा उसे बुलवा लिया था। राम की भी यही हालत है। परन्तु चाहे वह कितनी भी विनम्रता से माँगे, मैं उसे तुम्हें कभी नहीं दूँगा। जब यों तुम धूल-धूसरित हो, तभी तुम्हारा सौन्दर्य मुझे मुग्ध कर रहा है और तुम अच्छे कपड़े और गहने पहिन कर सन्तुष्ट होओगी, तब तो कहने ही क्या! मज़े से खाओ, पीओ, तुम्हें किसी बात की कमी नहीं है। सुख और सन्तोष से रहो।"

यह सुन एक तिनके को अपने और रावण के बीच रखकर सीता ने यों कहा—"मुझे छोड़ दो। पापी के लिए मोक्ष जितना दुर्लभ है, उतना ही मैं तुम्हारे लिए दुर्लभ हूँ। मैं किसी और की पत्नी हूँ। पतिव्रता हूँ। यदि तुम्हारी स्त्रियों को और कोई चाहने लगे, तो तुम क्या सोचोगे? शायद तुम्हें समझानेवाला कोई नहीं है, और शायद तुम किसी के समझाने पर भी नहीं सुनते हो! परन्तु जो काम तुमने किया है, उससे तुम्हारी, तुम्हारे राज्य की तुम्हारे राक्षस कुल की हानि ही होगी। मैं तुम्हारी अन्तःपुर की स्त्रियों पर बड़प्पन नहीं दिखाना चाहती। न मैं धन-सम्पदा ही चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ, बस, अपने पति के साथ रहना ही। यदि तुम हमेशा

सुखी रहना चाहते हो, तो मुझे राम के पास पहुँचाओ। राम से मैत्री कर लो। शरणागतों को राम क्षमा कर सकते हैं। नहीं तो राम और लक्ष्मण, तुम्हारा सर्वनाश कर देंगे। तुमसे बदला लेंगे। राम ने जनस्थान में जब राक्षसों को मार दिया था, तो तुम डर गये और जब वे और लक्ष्मण बाहर गये हुए थे, तो मुझे चोरी से उठा लाये। यदि आसपास होते, तो तुम भीगी बिल्ली बनकर भाग जाते। राम और लक्ष्मण से युद्ध न मोल लो।"

सीता के ये परुष वाक्य सुनकर रावण बड़ा खिझा। "तुम्हारी हरेक बात पर तुमको मौत की सज़ा दी जा सकती है। परन्तु मोहवश मैं वैसा नहीं कर रहा हूँ। दो मास की अवधि शेष है। यदि तुम ने तब तक मेरी पत्नी होना स्वीकार नहीं किया, तो मैं तुमको मरवा कर खा जाऊँगा। सावधान।"

उसने सीता के पास बैठी राक्षस स्त्रियों से कहा—"तुम जैसे भी हो, सीता का मन मेरी ओर लगाओ। जो काम उनको पसन्द नहीं है, ऐसे काम करने की भी मैं तुमको अनुमति देता हूँ।"

रावण के साथ की स्त्रियों में देव गन्धर्व स्त्रियाँ, सीता की स्थिति देख दुखी होकर, उन्होंने संकेतों द्वारा, अपनी सहानुभूति प्रकट की। रावण की पत्नी धान्य मालिनी ने उसका आलिंगन करके कहा—"इन्हें तुम पर प्रेम नहीं है। क्यों तुम उन पर यों मुग्ध होते हो? शायद उसके भाग्य में सुख नहीं है। इसलिए तुम्हें नहीं चुन रही है।"

रावण यह सुनकर मुस्कराया। स्त्रियों के साथ अपने घर चला गया। उसके जाने के बाद राक्षस स्त्रियों ने सीता को

बातों से मनाया। आयुधों से डराया। किसी ने रावण की प्रशंसा की, तो किसी ने राम की निन्दा की। "अगर जो हमने कहा, नहीं किया, तो हम तुम्हें खा जायेंगे और रावण से कह देंगे कि तुम मर गयी हो।" "झगड़ा न करना, इसके समान-समान टुकड़े करके बाँटना।" एक और ने कहा। "अगर साथ ताड़ी हो, तो और भी अच्छा होगा।" एक और ने कहा।

सीता हो एक तरफ़ भय और दूसरी तरफ़ घृणा हो रही थी। वह अपनी जगह से उठी। शिंशुपा वृक्ष की ओर जाकर अशोक वृक्ष के नीचे उसकी टहनी पकड़कर, खड़े होकर अपनी दुस्थिति पर सोचने लगी। क्या राम और लक्ष्मण मर गये हैं! क्या रावण ने उनको मरवा दिया है....थोड़ी देर सीता को यह सन्देह हुआ। फिर उसे सन्देह हुआ कि कहीं उन्होंने सन्यास न ले लिया हो। राक्षस स्त्रियाँ उनको चारों ओर बैठकर उनको सताती जाती थीं।

इतने में त्रिजटा नामक राक्षसी ने, जो सोकर उठी थी, कहा—"सीता को मत खा जाना। चाहो, तो मुझे खा लो, मैंने एक भयंकर स्वप्न देखा है।"

राक्षस स्त्रियाँ यह सुनकर डरीं। उन्होंने त्रिजटा से पूछा कि क्या सपना आया था।

"राम सफ़ेद फूलों की माला पहिन कर, सफ़ेद कपड़े पहिन कर, दान्त की पालकी पर सवार हो, लक्ष्मण के साथ आकाश के मार्ग से लंका पहुँचे। उनकी पालकी को हज़ार हँस ढो रहे थे और वह साफ़ सफ़ेद साड़ी पहिन कर, समुद्र के बीच के श्वेत पर्वत के ऊपर थी....यह सपना मैंने देखा। राम, लक्ष्मण चार दान्तोंवाले

बड़े हाथी पर सवार होकर, लंका में घूम फिर रहे थे। राम का हाथी, जब श्वेत पर्वत पर पहुँचा, तो सीता भी उस पर सवार हो गई। राम की गोदी में से सीता उठी, ऐसा लगा, जैसे सूर्य और चन्द्रमा को उन्होंने हाथों में पकड़ लिया हो। फिर मैंने राम को आठ सफ़ेद बैलोंवाले रथ पर आते देखा। सीता को मैंने पुष्पक विमान पर, जिस पर राम और लक्ष्मण सवार थे उत्तर की ओर जाते देखा और रावण कनेर फूल पहिनकर, सारे शरीर पर तेल पोतकर, लाल कपड़े पहिन कर, नशे में चूर भूमि पर लुढ़कता हुआ दिखाई दिया। फिर एक बार देखा कि रावण पुष्पक विमान से गिर गया था। मुझे और बिना बालवाले काले कपड़े पहिने हुए स्त्री को घसीटते हुए कहा। फिर रावण लाल फूल पहिन कर, रक्त चन्दन पोतकर, तेल पीता, हँसता, उछलता कूदता, पागल गधों के रथ पर जाता दिखाई दिया। एक बार जब रावण उस पर दक्षिण की ओर जा रहा था, तो उस पर से गिर पड़ा। वहाँ से उठकर गलियाँ बकता, वह कीचड़ के पोखर में डूब गया। कुम्भकर्ण भी इसी स्थिति में दिखाई दिया। रावण के लड़कों ने भी शरीर पर तेल पोत रखा था। रावण को सूअर पर, इन्द्रजित को मगर पर कुम्भकर्ण को ऊँट पर सवार होकर, मैंने दक्षिण की ओर जाते देखा। गोपुर और तोरण टूटकर गिर गये और लंका फिर समुद्र में डूबती हुई दिखाई दी। राम के एक दूत बन्दर ने लंका को जला दिया। तुम सीता को न सताओ। लंका पर अवश्य आपत्ति आनेवाली है।"

२६. फ़ूजीसान्

फ़ूजीयामा नाम का पर्वत शिखर, जापान में सबसे अधिक ऊँचा है—(१२,३९५ फीट) यह ज्वालामुखी है। २०० वर्ष पहिले वह फूटा और इसने टोकियो को ६ अंगुल राख के नीचे दबा दिया। इसका क्रेटर २००० फीट है। जापानी इसको पूजते हैं।

१. दिनेशचन्द्र "गजेन्द्र" जगदीशपुर

क्या आपने गेय कथाओं का प्रकाशन सदैव के लिए बन्द कर दिया है?

जी नहीं।

२. प्रनवकुमार, गँजपारा

क्या आप "अद्‌भुत देश में एलिस" नामक कहानी धारावाहिक रूप में छापेंगे?

हाँ, कभी न कभी तो छापेंगे ही।

३. राजेन्द्रकुमार, बारसिवनी

आपके पास बेताल कथाओं की पुस्तक मिल सकती है?

जी नहीं।

४. आशाराम महेश्वरी, कानपुर

क्या आपके यहाँ पर "रूपधर की साहसिक यात्रायें" और "तीन मान्त्रिक" की कहानियों का संग्रह आपने किसी किताब में छापा है?

जी, नहीं।

५. रामेश्वर प्रसाद बेफड़क, धारविसगँज

"चन्दामामा" का उद्देश्य क्या है?

आपका मनोरंजन और ज्ञानवर्धन।

६. के. सी. रघुवीर, नागपुर

आप चन्दामामा में कहानियाँ छोटे टाईप में क्यों नहीं छापते ?

क्योंकि बहुत से पाठक इसी टाईप में चाहते हैं और भी कई बातें हैं।

७. ओंप्रकाश अग्रवाल, राऊरकेला

"चन्दामामा" के वार्षिक ग्राहक बनने के लिए क्या करना चाहिए ?

वार्षिक चन्दा, व्यवस्थापक चन्दामामा, मद्रास-२६, के पते पर भेजना होगा।

८. दयाल मणुदास फुलवानी, फुसावल

चन्दामामा का नया वर्ष कब से शुरु होता है ? चन्दा भेजते समय रु. ७-२० के अतिरिक्त और भी पैसे भेजने पड़ते हैं क्या ?

चन्दे के लिए नव वर्ष जब आप चाहें, तभी शुरु होता है। चन्दा के अलावा और कुछ नहीं भेजना पड़ता है।

९. श्रवणसिंह, जुगसलाई

क्या "विचित्र जुड़वाँ" वी. पी. द्वारा मँगवा सकते हैं ?

"विचित्र जुड़वाँ" का मूल्य एक रुपया है, वी. पी. से किताब नहीं भेजी जाती। डाक खर्च के लिए ५० नये पैसे भेजने पड़ते हैं।

१०. ललितचन्द्र एन. के., आदिपुर, कच्छ

चन्दामामा पुस्तक प्रकाशन का "मेरे देखे कुछ देशों की झलक" का मूल्य कितना है ?

इस किताब का मूल्य डेढ़ रुपया है, (१ रु. ५० न. पै.) और रजिस्टर डाक खर्च के लिए १ रु. १५ न. पै.। यह चन्दामामा के पते पर मिलेगी।

क्या "मेरे देखे कुछ देशों की झलक" सचित्र है ?

जी हाँ।